प्राण चिकित्सा विज्ञान

– श्रीराम शर्मा आचार्य

प्राण चिकित्सा विज्ञान



लेखक :

पं० श्रीराम शर्मा आचार्य



प्रकाशक :

युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट

गायत्री तपोभूमि, मथुरा

फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९

फैक्स नं०- २५३०२००

पुनरावृत्ति सन् २०१४ मूल्य : १२.०० रुपये

वक्तव्य

प्राण मनुष्य शरीर की सार वस्तु है। इसके द्वारा न केवल हम जीवन धारण किए हुए हैं, वरन बाहरी प्रभावों से अपनी रक्षा भी करते हैं और दूसरों पर असर भी डालते हैं। ये दोनों ही कार्य अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। डॉक्टर पिच के मतानुसार इस कार्य में एक छोटे-मोटे बिजलीघर के बराबर विद्युत शक्ति खरच होती रहती है। हम अपनी इस शक्ति के बारे में कुछ अधिक जानकारी नहीं रखते इसलिए इन बातों को सुनकर आश्चर्य करते हैं। वह शक्ति हमारे जानने, न जानने की परवाह नहीं करती और जन्म से मृत्युपर्यंत कम-बढ़ मात्रा में सदैव बनी रहती है।

प्राणशक्ति का एक-एक परमाणु अपने अंदर अनंत शक्ति का भंडार छिपाए बैठा है। इसका उपयोग करके मनुष्य देवताओं जैसे अद्‌भुत कार्य कर सकता है। 'प्राण' की रोग निवारक शक्ति प्रसिद्ध है, यदि उसके अंदर यह गुण न होता, तो इतने विकारों से भरे हुए संसार में एक क्षण भी नीरोग रहना कठिन होता। उस शक्ति को यदि ठीक प्रकार से काम में लाने की विधि जान ली जाए तो न केवल स्वयं नीरोग रहें, वरन दूसरों को भी रोगमुक्त कर सकते हैं।

इस पुस्तक में कुछ ऐसी ही विधियाँ बताई गई हैं, जिनके द्वारा तुम अपने पीड़ित भाइयों को रोगमुक्त करके उनकी सेवा-सहायता करते हुए अपने जीवन को सफल बना सकते हो। जब तुम इनका प्रयोग करोगे, तो हमारी ही तरह इनकी अव्यर्थता पर श्रद्धा करने लगोगे।

—श्रीराम शर्मा आचार्य

प्राण चिकित्सा विज्ञान

महान प्राणतत्त्व

विश्वव्यापी प्राणशक्ति एक महान तत्त्व है, जो भिन्न-भिन्न मात्राओं में संसार की समस्त सजीव और निर्जीव वस्तुओं में पाई जाती है। मनुष्य के शरीर में जो विद्युत-प्रवाह बहता है, वह इसी महान प्राणतत्त्व का एक अंश है। हम लोग श्वास, अग्नि, जल और विचारों द्वारा इसे अपने अंदर खींचते हैं। जो शरीर उस प्राण-शक्ति को उचित मात्रा में खींच लेता है, वह प्रसन्न, उत्साहित, तेजपूर्ण और जीवटदार दिखाई देता है, किंतु जो उस शक्ति को पर्याप्त मात्रा में ग्रहण नहीं कर सकता, वह मोटा होने पर भी आलसी, उदास और निस्तेज देखा जाता है।

मानवीय प्राण में एक प्रबल रोग निवारक शक्ति है। इसका पता मनुष्य ने सृष्टि के आदि से ही लगा रखा है। बालक को जब कोई चोट लगती है, तो वह दौड़ा हुआ माता के पास जाता है। माता उस पीड़ित स्थान को फूँकती है और कुछ ही देर में वह अच्छा हो जाता है। रोता हुआ बच्चा यदि गोदी में उठा लिया जाए, तो चुप हो जाता है, क्योंकि उसका कष्ट चाहे वह किसी भी प्रकार का क्यों न हो, दूसरों के शरीर की बिजली से बहुत कम हो जाता है। बीमार या दुखी के सिर पर हाथ फेरा जाए, तो वह सुख का अनुभव करता है। चुंबन, आलिंगन, हाथ मिलाने, चरण छूने आदि क्रिया से जो असाधारण प्रसन्नता होती है, उसका वैज्ञानिक कारण यह है कि एक की प्राण शक्ति दूसरे में प्रवेश करके उसे मदद और आनंद देती है।

इच्छा करते ही हमारे अंग चल उठते हैं। खुजली का विचार आते ही हाथ उस स्थान पर पहुँच जाता है और खुजाने लगता है।

यह प्राणशक्ति का कार्य है। डॉक्टर लोग इसे नाड़ी का बल मानते हैं। वे कहते हैं कि शरीर का परिचालन नाड़ी-शक्ति से होता है, किंतु योगियों का मत है कि जैसे बिना तार के तार द्वारा समाचार भेजे जाते हैं, उसी प्रकार बिना नाड़ियों की सहायता के भी महान प्राणतत्त्व एक मनुष्य के शरीर से दूसरे के शरीर में और अखिल ब्रह्मांड में गति कर सकता है।

जिन लोगों ने योगाभ्यास किया है और थोड़ी-बहुत सफलता प्राप्त की है, वह अपने अंत:नेत्रों से नाड़ी जाल में बहती हुई प्राणशक्ति को प्रत्यक्ष देख सकते हैं। शरीर से निकलने वाले प्राण-तेज (औरा) को भी वे अच्छी तरह देखते हैं। यह तेज हलके गुलाबी रंग का प्रकाश विद्युत स्फुलिंग या किरणों के रूप में दिखाई देता है। अभ्यासी यह भी देखते हैं कि जब कोई चिकित्सक मार्जन करके हाथ झाड़ता है तो उसकी उँगलियों के सिरों में से चिनगारियाँ-सी झड़ती हैं। जो लोग अभ्यासी नहीं हैं, वह भी इस शक्ति को गरम चूल्हे में से निकलती हुई हवा, भाप या काँपती हुई किसी वस्तु की तरह अनुभव कर सकते हैं।

हलके विचार मस्तिष्क में हर समय बहते रहते हैं और वे पानी की लहरों की तरह आकाश में गति करते रहते हैं। यदि इन विचारों के साथ प्राणशक्ति भी सम्मिलित हो, तो आश्चर्यजनक रूप से बलशाली हो जाते हैं। यदि प्रबल भावना और दृढ़ इच्छाशक्ति की सहायता से कोई विचार प्रेरित किए जाएँ तो वह निशाने पर गोली की तरह बैठते हैं। प्रबल प्राणशक्ति वाले विचारकों की इच्छाएँ विश्व में हलचल मचा देती हैं। मार्क्स मर गया, पर उसकी विचारधारा अब भी संसार के कोने-कोने में असर पैदा कर रही है। क्या तुम नहीं देखते कि एक सद्‌वक्ता हजारों आदमियों की सभा को क्षण भर में हँसा या रुला देता है। एक प्रबल मनस्वी सेनापति अपने प्राण फूँककर सेना में नवीन बल भर देता है। प्राण चिकित्सक इन बातों का महत्त्व समझते हुए चिकित्सा करते समय अपने

स्वास्थ्यदायक प्रबल विचार रोगी के लिए प्रेषित करता है। वह जानता है कि इसके बिना मार्जन, श्वासोच्छ्वास आदि की कोई भी क्रिया निष्फल होगी।

प्राणबल कोई काल्पनिक ख्याल या मन के लड्डू नहीं हैं और न स्वप्न की तरह यह कोई मनगढंत है। मनोवैज्ञानिकों द्वारा इस विषय में कठोर परीक्षाएँ कर ली गई हैं और जब इसकी आशातीत सफलता आँखों से देख ली गई है तभी इसे वैज्ञानिक स्वरूप मिल सका है। प्राणबल को दूसरे के शरीर में प्रवेश करके उसके अंदर असाधारण परिवर्तन किया जा सकता है। किसी स्थान विशेष से वहाँ का दूषित, स्वच्छ या दोनों तरह का प्राण थोड़ी या पूरी मात्रा में हटाकर अलग किया जा सकता है। कलकत्ता (कोलकाता) के प्रेसीडेंसी सर्जन डॉक्टर एसलेड ने सन् १८४२ में अपने प्राणबल से रोगियों के स्थान विशेष या संपूर्ण मस्तिष्क को सत्ता शून्य करके कितने ही सफल ऑपरेशन किए थे और रोगियों को इस बात का पता भी नहीं चला कि कब हमारा ऑपरेशन किया गया। उस समय तक सुँघाकर बेहोश करने की दवा क्लोरोफार्म का आविष्कार भी नहीं हुआ था। लंदन में डॉक्टर ईलिर ने भी इसी प्रकार के अनेक ऑपरेशन किए थे। अब भी जिन्हें मैस्मेरिज्म द्वारा प्रगाढ़ निद्रा में डाल दिया जाता है, वह सुई चुभोने या इसी प्रकार की और छोटी-मोटी पीड़ाओं का कुछ भी अनुभव नहीं करते।

प्राण की प्रबल शक्ति का इच्छानुसार उपयोग किया जा सकता है। एक इंच जगह में कितनी सूर्यशक्ति व्याप्त है, इसका अनुमान आतशी शीशे द्वारा किया जा सकता है। उतनी जगह पर फैली हुई सूर्य किरणों को जब एक बिंदु पर एकत्रित किया जाता है तो अग्नि जल उठती है और वह अग्नि बड़े-बड़े जंगलों को नष्ट कर सकती है। इसी प्रकार मनुष्य शरीर की प्राणविद्युत का विधिपूर्वक जब एकत्रीकरण किया जाता है, तो अद्भुत शक्ति संपन्न हो जाती है। यह प्राणविद्युत रोगी के जिस अंग पर फेंकी जाती है, वहाँ एक

विचित्र हलचल पैदा हो जाती है। जमा हुआ घी गरमी पाकर जिस प्रकार पिघलने लगता है, उसी तरह रोगों के बीजाणु भी उस स्थान से हटने लगते हैं। सिर में रक्त इकट्ठा हो जाने के कारण जब मस्तक में दरद होने लगता है, तब मार्जन द्वारा वह पीड़ा थोड़ी ही देर में अच्छी हो जाती है। कारण यह है कि प्राणशक्ति का प्रभाव उस स्थान पर तुरंत ही होता है और वहाँ इकट्ठा हुआ रक्त कुछ ही देर में वहाँ से हटकर बह जाता है।

पागलपन से मिलती-जुलती बहुत-सी बीमारियाँ सूक्ष्मशरीर में कोई खराबी आ जाने के कारण होती हैं। डॉक्टर लोग जानते हैं कि यदि कोई मांसपेशी निकम्मी पड़ जाए, तो वहाँ रक्त जमा होने लगेगा। इस प्रकार सूक्ष्मशरीर के किसी अंश में कुछ गड़बड़ी हो जाए तो उसकी पोल में शरीर के रोग कीट जमा होने लगेंगे। जब सूक्ष्मदेह निर्बल हो जाती है और बाहर के जरा-से भी झटके को सहने की शक्ति नहीं रखती तो परिस्थितियों का हलका-सा झटका भी मस्तिष्क को उद्विग्न कर देता है, फलस्वरूप चिढ़-चिढ़ापन, घबराहट, आत्मग्लानि, निराशा आदि का आक्रमण होने लगता है। पेशियों और नाड़ियों की बीमारियों से तो मस्तिष्क का खास संबंध है। इन्हीं सब बातों को देखते हुए पश्चिमी देशों में प्राणविज्ञान को चिकित्सा शास्त्र में प्रमुख स्थान दिया गया है।

कई डॉक्टर मस्तिष्क की शक्ति को ही प्राण मानते हैं। उनका का यह कथन ठीक नहीं। अब अनेक वैज्ञानिक यह सिद्ध करने लगे हैं कि मानवीय विद्युत प्राणशक्ति है और वह किसी एक स्थान में न रहकर समस्त शरीर में रहती है। डॉक्टर अलबर्ट का कथन है कि मस्तिष्क केवल तर्क और बुद्धि का स्थान है अन्य शक्तियाँ इस स्थान में नहीं रहतीं। डॉक्टर मोडस्ले ने लिखा है कि स्मरण शक्ति नाड़ी चक्रों में रहती है, इसी कारण हमारे शारीरिक अवयव अपना दैनिक कार्य करते रहते हैं। डॉक्टर हेमंड कहते हैं कि प्रेरणा शक्ति का मस्तिष्क से कोई संबंध नहीं है। प्रो० इनजेलो बताते हैं कि

निद्रावस्था में मनुष्य का दिमाग सोता रहता है और प्राणतत्त्व द्वारा शरीर की रक्षा होती रहती है। प्रयोगशालाओं में इस बात का सफल परीक्षण हो चुका है कि छोटे जानवरों का मस्तिष्क निकाल दिया जाए तो भी पूर्ववत सब काम करते रहते हैं। छोटे जंतुओं में दिमाग होता ही नहीं, पर वे प्राणशक्ति के बल से अपना जीवन निर्वाह करते हैं। तात्पर्य यह है कि मनुष्य के सारे काम करने का केंद्र खोपड़ी के अंदर बंद नहीं है, वरन समस्त शरीर-व्यापी उसकी मानवी विद्युत के अंदर है, जिसके प्रत्येक परमाणु में २, ४२, २५० मन वजन उठाने की शक्ति है और जो ताँबे के तारों में चलने वाली बिजली की अपेक्षा हजारों गुनी सूक्ष्म और शक्ति संपन्न है। प्रो० एलिशाग्रे के शब्दों में यह शक्ति अद्‍भुत है। वे कहते हैं कि प्रकाश की रफ्तार प्रति सेकंड एक लाख छियासी हजार मील है किंतु विचारशक्ति चार हजार से लगाकर ८ पद्‍म मील प्रति सेकंड की रफ्तार से चल सकती है। दिन में सूर्य की किरणें उसकी चाल को कुछ रोकती हैं, परंतु रात के समय उसका वेग बहुत तेज होता है।

विदेशों में प्राण चिकित्सा प्रणाली का बहुत सफलतापूर्वक प्रयोग हो रहा है। यूरोप, अमेरिका के अनेक देशों में यह प्रणाली प्रचलन में आ रही है और अनेक बड़े-बड़े अस्पताल इन विधियों से हजारों रोगियों को अच्छा करते हैं। प्राण तत्त्व को सब मानसिक चिकित्सक स्वीकार करते हैं और उसको मेंटल हीलिंग, क्रिश्चिन साइंस, न्यूथाट मैस्मेरिज्म, हिप्नोटिज्म, इलेक्ट्रिक बायलॉजी, साइको ऐनेलिसिस, साइकोथैरेपी आदि नामों से पुकारते हैं। नामों की भिन्नता के कारण ये अलग-अलग वस्तुएँ नहीं हो सकतीं। वास्तव में यह एक ही पदार्थ है।

प्राण चिकित्सा की विशेषता

आध्यात्मिक चिकित्सा शास्त्र के विद्यार्थी यह बहुत पहले जान चुके होंगे कि स्थूल शरीर की भाँति एक सूक्ष्मशरीर भी मनुष्य का गुण होता है। वह आँखों से देखा नहीं जाता फिर भी उसमें शरीर

के गुण होते हैं। उसकी शक्ति स्थूलशरीर की अपेक्षा कई गुनी बढ़ी होती है। सच तो यह है कि स्थूल शरीर का बल सूक्ष्मशरीर से ही प्राप्त होता है। बीमारियाँ स्थूल शरीर से नीचे उतरकर सूक्ष्मशरीर पर भी जब अपना कब्जा जमाने लगती हैं तो वह कष्टसाध्य या असाध्य हो जाती हें। कई जन्मों तक और कई पीढ़ियों तक पीछा नहीं छोड़ने वाली कंठमाला, उपदंश, कुष्ठ, क्षय आदि पुरानी पड़ने पर सूक्ष्मशरीर में घुस जाती हैं। वैद्य, डॉक्टरों की दवाइयाँ स्थूल होती हैं। उनका प्रभाव स्थूलशरीर तक ही होता है। पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलने वाले या जन्म-जन्मांतरों से आने वाले रोगों को देखकर हकीम बेवश हो जाते हैं, उनसे कुछ करते-धरते नहीं बनता और असाध्य कहकर पीछा छुड़ा लेते हैं।

कुछ रोग एक प्राण से दूसरे प्राण में घुसकर विकृत हो जाने के कारण होते हैं। भूतोन्माद साँप-बिच्छू का काटना ऐसे ही रोग हैं। मन, बुद्धि और अंत:करण के विकारों से मृगी, योषापस्मार, स्नायुतंतुओं की निर्बलता, पागलपन, निराशा, बुद्धिहीनता, क्रोध, चिंता, निद्रा की कमी, उदासीनता, भ्रम, बुरी आदतें आदि रोग होते हैं। मिथ्या धारणा करने के कारण भी कई प्राणघातक कष्ट उठ खड़े होते हैं। इन सब रोगों की जड़ सूक्ष्मशरीर तक पहुँच जाती है। प्राण चिकित्सा ऐसे रोगों की अमोघ ओषधि है। सूक्ष्म शरीर में प्राणशक्ति को प्रवेश कराकर उन गहरी जड़ों को खोदने का काम प्राणशक्ति से ही हो सकता है।

शरीर के साधारण रोग प्राण चिकित्सा विधि से बहुत जल्द अच्छे हो जाते हैं। उनकी जड़ को उखाड़ लेते हैं, जिससे ओषधि उपचार के परिणाम की तरह एक के बाद दूसरा नया रोग खड़ा नहीं होता।

प्राणशक्ति से टूटी हुई हड्डी नहीं जोड़ी जा सकती, शरीर में घुसा हुआ शस्त्र नहीं निकाला जा सकता और न वह रोग अच्छे किए जा सकते हैं, जिनमें ऑपरेशन की अनिवार्य आवश्यकता है,

किंतु निश्चय ही डॉक्टर के द्वारा एक बार हड्डी जोड़ देने, घुसा हुआ शस्त्र निकाल देने या ऑपरेशन कर देने के पश्चात घायल स्थान को प्राणशक्ति से बहुत जल्दी अच्छा किया जा सकता है।

ऐसे दुर्बल शरीर जो अनेकानेक बहुमूल्य और पौष्टिक आहार खाने पर भी बलवान, सतेज और नीरोग नहीं हो सके थे, प्राण-शक्ति के प्रयोग से अद्भुत उन्नति करते हैं। कई के वजन में असाधारण वृद्धि होते हमने देखी है और कई जो अपने को मृत्यु के मुँह में पड़ा हुआ समझ रहे थे, जादू की तरह नवीन जीवन धारण करते हुए हमारे अनुभव में आए हैं।

प्राण चिकित्सा का इतिहास

प्राणशक्ति से रोग मोचन की क्रिया भारत के ऋषि-मुनि ही करते हों सो बात नहीं। संसार के समस्त भागों में अति प्राचीनकाल से इसका प्रचलन रहा है। ईसा की छठवीं शताब्दी में ग्रीस देश के एक पंडित सोलन ने ऐसे बहुत-से रोगी प्राणशक्ति से अच्छे किए थे, जो ओषधि से ठीक नहीं हो सके। पाँचवीं शताब्दी में नील नदी के तट पर रहने वाले जीयस नामक योगी ने इस चिकित्सा में बड़ी ख्याति प्राप्त की थी। ईसा से ४६१ वर्ष पूर्व एक डॉक्टर हिपोक्रेटस इस विद्या के पंडित थे। एक दूसरा ग्रीक विद्वान एसक्लिपियेडिस मार्जन द्वारा उन्माद रोग को ठीक करने के लिए बहुत प्रसिद्ध था। ईसाई धर्म के प्रवर्तक यीशु और उनके साथी मोजेस दोनों ने यह विद्या मिश्र देश के पुरोहितों से सीखी थी। इंजील से प्रकट होता है कि यीशु ने इस विद्या के बल से असंख्य पीड़ितों को अच्छा किया था। सन् १७०० में आयरलैंड के ग्रीटेक्स नामक एक न्यायाधीश में प्राणविद्युत अद्भुत परिमाण में थी उन्होंने देश-विदेश में घूम-घूमकर अनेक असाध्य रोगियों को अच्छा किया था। थियोसोफिकल सोसाइटी के नेता कर्नल आलकट अपनी इस शक्ति के लिए प्रसिद्ध थे। डॉक्टर मैस्मर ने तो इस विज्ञान की खोज में अपना जीवन ही लगा दिया और उसने मैस्मेरिज्म नामक एक व्यवस्थित

चिकित्सा शास्त्र ही तैयार कर दिया। ईसा से ५०० वर्ष पूर्व यूनान के योगी पैथोगोरस हाथ के इशारे से बड़े-बड़े भयंकर वन्य जंतुओं को इच्छानुवर्ती बना लेने और पीड़ितों को चंग कर देने के लिए प्रख्यात थे। भारतवर्ष के योगी इस विद्या में चिरकाल से निपुण रहे हैं। इपीरस का राज पिन्हस लोगों को छूकर उनकी आँत और तिल्ली की बीमारियों को दूर करता था। क्रेस्पेसियन का बादशाह हाथ फिराकर सिर की पीड़ा, पंगुता, अंधापन आदि अच्छा करता था। हेडरियन मृगी के रोगियों को छूकर अच्छा कर देता था। ओलफ राजा भी इस विद्या का पंडित था। पुराने जमाने में इंग्लैंड और फ्रांस के बादशाह गले के रोगों को स्पर्श द्वारा अच्छा करते थे। इंग्लैंड में 'राजशूक' नामक एक रोग था, जो राजा के स्पर्श से ही अच्छा होता था। सत्रहवीं शताब्दी में लंदन का एक माली लेन्हर्ट और सन् १८१७ ई० में सिलिसिया का रिचर नामक चौकीदार अपने स्पर्श द्वारा बहुत-से बीमारों को अच्छा कर चुके हैं। इसी प्रकार पंडित इस्कुलेपियस इंग्लैंड का पुजारी डरूउड, इवानहेमंट, स्काटलैंड निवासी मेक्सवेल, पादरी हेहल आदि असंख्य माननीय सज्जनों ने इस विधि का उपयोग किया है।

प्राणाकर्षण क्रिया

प्राणशक्ति को अधिक मात्रा में अपने अंदर धारण करना अपनी शारीरिक, मानसिक उन्नति के लिए आश्यक है। अपने रोगों को दूर करने के लिए जरूरी है तथा उन लोगों की तो अनिवार्य आवश्यकता है, जिनको प्राणतत्त्व से दूसरों का इलाज करना पड़ता है। यह प्राणतत्त्व संसार में प्रचुर मात्रा में भरा पड़ा है। यह न सोचना चाहिए कि यह प्राण कहाँ से आएगा और किस प्रकार प्राप्त किया जा सकेगा। इसका प्राप्त करना कुछ भी कठिन नहीं है, क्योंकि हमारे चारों ओर प्राण का महासागर लहलहा रहा है। हम हर घड़ी इस शक्ति-सागर में से काम चलाऊ पदार्थ लेते हैं और उसी के बल पर जीवित एवं क्रियाशील रहते हैं। जिस प्रकार नदी में

रहने वाली मछली के लिए यह सुगम है कि वह चाहे जितना पानी बिना किसी रोक-टोक और कठिनाई के ले ले, उसी प्रकार हर आदमी के लिए यह आसान है कि वह जितना चाहे उतना प्राण, उस महाप्राण में से खींचकर अपने अंदर भर ले।

बहुत-से लोग सरल और साधारण अभ्यासों को तुच्छ एवं हीन मानते हैं और उन्हें हीन दृष्टि से देखते हैं। उनको यह पसंद होता है कि शब्दाडंबर और कई पेचीदा तरीकों से क्रियाएँ बताई जाएँ। जितना ही जिस क्रिया में आडंबर हो, वह उतनी ही महत्त्वपूर्ण होगी, यह धारणा वास्तव में ही गलत है। प्रकृति ने मनुष्य के लिए सभी वस्तुएँ सरल कर दी हैं। जो चीज जितनी आवश्यक है, उतनी ही उसकी प्रचुरता है और प्राप्त करना सरल है। हमारे लिए हवा सबसे जरूरी है, वह भी थोड़े ही प्रयत्न से मिल जाती है। इसके बाद जिन वस्तुओं की आवश्यकता का नंबर जितना नीचा है, वह उतनी ही महँगी और कष्टसाध्य होती जाती है। प्राण हवा से अधिक जरूरी है, क्योंकि हवा के बिना तो कोई शायद कुछ दिन जी भी जाएँ, पर प्राण के बिना तो जीवन हो ही नहीं सकता। यदि इसे प्राप्त करना उन पेचीदे तरीकों के साथ हो जिन्हें बड़े शब्दाडंबर के साथ वर्णन किया जाता है, तो हमारा विचार है कि वह धोखा है। साँस लेने, पानी पीने, भोजन करने के तरीके बहुत आसान हैं, इसी प्रकार प्राणोत्पादन की विधि भी सरल है। हाँ, जिस प्रकार भोजन करने में खूब बारीक चबा-चबाकर खाने, बीच में अधिक पानी न पीने आदि नियमों को पालन करके उसे महत्त्वपूर्ण बनाया जा सकता है, उसी प्रकार प्राणोत्पादन की क्रिया को कुछ विशिष्ट रीतियों के साथ करने से उसमें विशेषता पैदा हो जाती है और इच्छित लाभ प्राप्त होता है।

प्राण अत्यंत सूक्ष्मतत्त्व है। जो वस्तु जितनी सूक्ष्म होती है, उतने ही हलके तरीके से प्राप्त होती है। भोजन करते समय उसके रूप को पूरी तरह अनुभव करते हैं। भोजन के टुकड़े-टुकड़े के

स्वाद को जिस प्रकार मालूम कर लेते हैं, उसी तरह पानी के जर्रे-जर्रे का स्वाद मालूम करना कठिन है। भोजन को तुम बता सकते हो कि इसमें नमक, मिर्च, खटाई-मिठाई या अमुक पदार्थ मिले हुए हैं, पर पानी को उतनी आसानी से नहीं जान सकते कि इसमें नदी, कुएँ, तालाब या किसका किस मात्रा में पानी मिला हुआ है। हवा की बात तो इससे भी सूक्ष्म है। विशेष ध्यान दिए बिना यह मालूम भी नहीं होता कि हम साँस ले रहे हैं और इस बात का आमतौर से ध्यान नहीं रखा जाता। प्राणतत्त्व इन सब पदार्थों से बहुत अधिक सूक्ष्म है इसलिए उसका लेना, छोड़ना इंद्रियों द्वारा अनुभव नहीं किया जा सकता है। गरम लोहा कुछ देर खुली जगह में छोड़ दिया जाए तो वह ठंढा हो जाता है, कारण यह है कि आस-पास की ठंढी हवा उसे छूती हुई बहती है और उसे अपना गुण दे देती है। हवा ने लोहे का कौन-सा हिस्सा छुआ? कहाँ होकर आई? कहाँ होकर गई? इस प्रश्न का तुम बारीक उत्तर नहीं दे सकते। इसी प्रकार यह नहीं मालूम होता कि प्राणतत्त्व किस छेद से होकर किस प्रकार घुस जाता है और कहाँ होकर निकलता है। हवा को ही लीजिए वह नाक या मुँह द्वारा ही शरीर में नहीं पहुँचती, वरन समस्त शरीर के रोमकूपों में होकर भी आती-जाती है। जिस प्रकार एक्सरेज ठोस पदार्थों में भीतर भी घुस जाती है, जैसे साफ काँच को हमारी दृष्टि पार कर जाती है, उसी प्रकार शरीर के हाड़-मांस का कोई प्रतिबंध प्राणशक्ति के आने-जाने में कुछ भी बाधक नही होता। नदी समतल भूमि पर बहती रहती है, कहीं कोई विशेषता नहीं होती, किंतु यदि उसके तल में गड्ढा बना दिया जाए, तो अन्य स्थानों की अपेक्षा उस स्थान पर बहुत-सा पानी एकत्रित हो जाएगा। प्राण की गति हर आदमी में एक-सी गति से बहती रहती है, किंतु उथली और गहरी जमीनों में जैसे कम-ज्यादा पानी रहता है, उसी तरह उस शक्ति का सदुपयोग-दुरुपयोग करने वालों में वह ज्यादा-कम मात्रा में भी होती है और हो सकती है।

दृढ़ इच्छाशक्ति और जोरदार विचारबल के आकर्षण से प्राण अपने अंदर मात्रा में जमा हो सकता है और इस जमा की हुई पूँजी को जिस काम में खरच किया जाएगा, उसी में आनंद आएगा।

अब प्राणशक्ति को अधिक मात्रा में अपने अंदर आकर्षित करने के कुछ अभ्यास बताए जाते हैं—

कहीं एकांत स्थान में जाओ। समतल भूमि में नरम बिछोना बिछाकर पीठ के बल लेट जाओ। मुँह ऊपर को रहे। पैर, कमर, छाती, सिर सब एक सीध में रहें। दोनों हाथ सूर्यचक्र पर (आमाशय का वह स्थान जहाँ पसलियाँ और पेट मिलता है) रख लो। मुँह बंद रखो। शरीर को बिलकुल ढीला छोड़ दो मानो वह कोई निर्जीव वस्तु है और उससे तुम्हारा कुछ भी संबंध नहीं है। कुछ देर शिथिलता की भावना करने पर शरीर बिलकुल ढीला पड़ जाएगा। अब धीरे-धीरे नाक द्वारा साँस खींचना आरंभ करो और दृढ़ शक्ति के साथ भावना करो कि विश्वव्यापी महान प्राण भंडार में से मैं स्वच्छ प्राण, साँस के साथ खींच रहा हूँ और वह प्राण मेरे रक्त प्रवाह तथा समस्त नाड़ी-तंतुओं में प्रवाहित होता हुआ सूर्यचक्र में इकट्ठा हो रहा है। इस भावना को कल्पना-लोक में इतनी दृढ़ता के साथ उतारो कि प्राणशक्ति की बिजली जैसी किरणें नासिका द्वारा देह में घुसती हुई चित्रवत दीखने लगें और अपने रक्त का दौरा एवं नाड़ी समूह तसवीर की तरह दीखें तथा उसमें प्राण-प्रवाह बहता हुआ नजर आए। भावना की जितनी अधिकता होगी, उतनी ही अधिक मात्रा में तुम प्राण खींच सकोगे। फेफड़ों को वायु से अच्छी तरह भर लो और पाँच से दस सेकंड तक उसे भीतर ही रोके रहो। आरंभ में पाँच सेकंड काफी है, पश्चात अभ्यास बढ़ने पर दस सेकंड तक रोक सकते हैं। साँस रोके रहने के समय अपने अंदर प्रचुर परिमाण में प्राण भरा हुआ अनुभव रहना चाहिए। अब वायु को मुँह के द्वारा बाहर निकालो। निकालते समय ऐसा अनुभव करो कि शरीर के सारे दोष, रोग और विष इसके द्वारा निकाले जा

रहे हैं। दस सेकंड तक बिना हवा के रहो और फिर पूर्ववत प्राणाकर्षण प्राणायाम करना आरंभ कर दो। स्मरण रखो कि प्राण आकर्षण का मूल तत्त्व साँस खींचने-छोड़ने में नहीं, वरन आकर्षण की उस भावना में है, जिसके अनुसार अपने शरीर में प्राण का प्रवेश होता हुआ चित्रवत् दिखाई देने लगता है।

इस प्रकार की श्वास-प्रश्वास क्रियाएँ दस मिनट से लेकर धीरे-धीरे आधा घंटे तक बढ़ा लेनी चाहिए। श्वास द्वारा खींचा हुआ प्राण सूर्य चक्र में जमा होता जा रहा है, इसकी विशेष रूप से भावना करो। यदि मुँह द्वारा श्वास छोड़ते समय आकर्षित प्राण को भी छोड़ने की भी कल्पना करने लगे तो यह सारी क्रिया व्यर्थ हो जाएगी और कुछ भी लाभ न मिलेगा। ठीक तरह से प्राणाकर्षण करने पर सूर्यचक्र जाग्रत होने लगता है। ऐसा प्रतीत होता है कि पसलियों के जोड़ का आमाशय के स्थान पर जो गड्ढा है, वहाँ सूर्य के समान एक छोटा-सा प्रकाश बिंदु मानस नेत्रों से दीखने लगा है। यह गोला आरंभ में छोटा, थोड़े प्रकाश का धुँधला मालूम देता है, किंतु जैसे-जैसे अभ्यास बढ़ने लगता है, वैसे-वैसे वह साफ, स्वच्छ, बड़ा और प्रकाशवान होता जाता है। जिनका अभ्यास बढ़ा-चढ़ा है, उन्हें आँखें बंद करते ही अपना सूर्यचक्र साक्षात सूर्य की तरह तेजपूर्ण दिखाई देने लगता है। यह प्रकाशित तत्त्व सचमुच प्राणशक्ति है। इसकी शक्ति से कठिन कार्यों में अद्भुत सफलता प्राप्त होती है।

अभ्यास पूरा करके उठ बैठो। तुम्हें मालूम पड़ेगा कि रक्त का दौरा तेजी से हो रहा है और सारे शरीर में एक बिजली-सी दौड़ रही है। अभ्यास के उपरांत कुछ देर शांतिमय स्थान में बैठना चाहिए और हो सके तो किसी सात्त्विक वस्तु का जलपान कर लेना चाहिए। अभ्यास से उठकर एकदम किसी कठिन काम में जुट जाना, स्नान, भोजन या मैथुन करना निषिद्ध है। अभ्यास के लिए प्रात:काल का समय सर्वोत्तम है।

रोगों का निदान

रोगी को पेट के बल नीचे की ओर मुँह करके किसी मुलायम बिछौने पर लिटा दो, छाती के नीचे एक तकिया लगाओ, जिससे उसकी ठोढी और मुँह जमीन पर न घिसें। हाथों को दोनों बगलों के साथ लंबा सटवाकर आराम से रख दो।

तुम्हें जानना चाहिए कि शरीर की स्नायविक शक्ति मेरुदंड के साथ संबंधित है। मूल में खराबी आने से उसकी शाखाएँ भी गड़बड़ाती हैं। विभिन्न कारणों का असर मेरुदंड पर पड़ता है और उसमें बहुत-सी छोटी गाँठें पड़ जाती हैं। कहीं-कहीं मांसपेशियाँ सिकुड़ जाने के कारण कुछ कड़ापन-सा आ जाता है। किसी जगह स्नायु तंतु अकड़कर इठ-से जाते हैं। इन विकृतियों को रोगों की जड़ मानते हुए उनका निदान बड़ी सावधानी से करना चाहिए।

पट लेटे हुए रोगी की गरदन के नीचे जिस स्थान से कि रीढ़ की हड्डी उभरी हुई मालूम पड़ती है। अपने दाहिने हाथ की तर्जनी और मध्यमा उँगलियाँ इस प्रकार रक्खो कि रीढ़ की हड्डी उन दोनों के बीच आ जाए। अब धीरे-धीरे इन उँगलियों को नीचे सरकाओ और बहुत ध्यानपूर्वक देखते चलो कि कहीं (१) कड़ापन (२) गाँठ (३) नसों की ऐंठन तो नहीं है। इन तीनों में से एक भी जहाँ प्रतीत हो, उस स्थान को नोट कर लो। उस स्थान को याद न रख सको, तो खड़िया की रंगीन बत्तियों से निशान लगा दो। तीनों बातों के लिए तुम इच्छानुसार अलग-अलग रंग चुन सकते हो। जैसे कड़ेपन के लिए सफेद, गाँठों के लिए गुलाबी और ऐंठन के लिए पीला। इन रंगों का कोई नियम नहीं है। यह अपने सुभीते की बात है। जो चिकित्सक उन स्थानों को याद रख सकें, उन्हें तो इसकी बिलकुल जरूरत नहीं है। इस प्रकार इन तीनों बातों को अच्छी तरह अपने मन में रख लो।

अभी दो बातें तुम्हें और भी जाननी हैं। वे हैं 'अनावश्यक सरदी और गरमी।' उँगलियों को उलटा करो और उसके पृष्ठ भाग को चौड़ा करके धीरे-धीरे रीढ़ के आरंभिक स्थान से लेकर अंतिम भाग तक लाओ। चारों उँगलियाँ आपस में सटी हुई इस प्रकार तिरछी रहनी चाहिए मानो मेरुदंड कोई चाकू है और उससे चारों उँगलियों को एक साथ काटा जा रहा है। कई व्यक्तियों के उँगलियों के पृष्ठ भाग के ज्ञानतंतु पूर्ण सचेत नहीं होते और वे सरदी-गरमी का ठीक अनुमान नहीं कर सकते। ऐसी दशा में हथेली की पीठ से यह काम लिया जा सकता है। साधारणत: पूरे मेरुदंड में एक समान गरमी रहती है, पर जहाँ कहीं वह कम-ज्यादा हो, उस स्थान को भी मालूम कर लो।

अब तुमने रोग की इन पाँच मूल बातों को जान लिया। यह ऐंठन, सूजन, गाँठ, सरदी, गरमी रोग के कारण हुई या इनकी वजह से रोग हुआ, इस बहस में पड़ने की तुम्हें जरूरत नहीं है। असल में साधारण तर्क या मामूली उपकरणों से यह बात जानी नहीं जा सकती। किसी के शरीर की यदि दिन-रात हर घड़ी मनोवैज्ञानिक यंत्रों द्वारा परीक्षा होती रहे, तभी यह बात मालूम हो सकती है। मोटे अनुमान इस मामले में सही नहीं बैठ सकते। जब तक हर चिकित्सक हर मरीज के लिए एक बढ़िया प्रयोगशाला का प्रबंध न कर सके, इन बाल की खालों को उधेड़ना छोड़ देना पड़ेगा। शुरुआत चाहे जिधर से हुई हो, पर अब रोग का मूल स्थान यह है। इन छोटी-छोटी विकृतियों में सुधार होते ही बीमारी अपने आप अच्छी हो जाएगी। पीड़ित अंगों के स्थानीय उपचार भी करने चाहिए, परंतु मूल स्थान को न भूलना चाहिए। रक्त विकार के कारण उठे हुए फोड़ों को कोई मलहम लगाकर अच्छा किया जा सकता है, सिर के दरद को 'एस्प्रिन' खिलाकर तुरंत बंद किया जा सकता है, परंतु यदि उसके मूल कारणों को भी दूर न किया जाए, तो बीमारी कुछ समय बाद उसी रूप में या किसी दूसरे रूप में फिर पैदा हो

सकती है। इसी प्रकार पेट, छाती, सिर आदि का स्थानीय प्राण उपचार करते समय मेरुदंड स्थित रोगों की मूल को खोदना भूल न जाना चाहिए।

अनुभव में आया है कि कड़ापन-'सूजन' के लिए श्वासोच्छ्वास, गाँठों के लिए स्पर्श, ऐंठन के लिए कंप, सरदी के लिए मालिश और गरमी के लिए मार्जन अच्छा उपचार है। जहाँ जिस प्रकार की जैसी आवश्यकता प्रतीत हो, उसका निर्णय चिकित्सक को अपनी सूक्ष्म बुद्धि के अनुसार करते हुए रीढ़ का उपचार करना चाहिए। रोग का स्थानीय उपचार करने से पहले रीढ़ की परीक्षा और उसकी चिकित्सा करना आवश्यक है, तदुपरांत पीड़ित अंगों पर प्रयोग करना चाहिए।

रोगी का उपचार

रोगी का उपचार करने के समय कुछ बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। जब उसके पास जाओ अपना अजनबीपन प्रकट मत करो। उससे इस प्रकार बात-चीत करो, मानो वह तुम्हारा बहुत दिनों का परिचित है। अपनी आवाज धीमी, दृढ़ और स्पष्ट रखो। बड़ी सहानुभूति के साथ बात-चीत करो। बीमार को जो कठिनाइयाँ होती हैं उनके बारे में थोड़ा प्रकाश डाल दो। चारपाई पर पड़े-पड़े पीठ दुःख पड़ती होगी, घूमने-फिरने को जी चाहता होगा, खाने को तो बेस्वाद चीजें ही मिलती होंगी। इस प्रकार उसके छोटे-मोटे कष्टों को अपने ही मुँह कह देने पर रोगी का मन हलका हो जाता है। वह इन बातों को तुम्हारी सहानुभूति के रूप में स्वीकार करता है, परंतु खबरदार उसकी बीमारी बढ़ा-चढ़ाकर मत कहो। पिछले समय में बहुत कष्ट पा चुके हो, पर 'अभी हालत खराब है' और 'आगे स्थूल से अच्छे होंगे' इस प्रकार की बातें करने से बुरा असर पड़ेगा। उससे कहना चाहिए कि अब तुम्हारी बीमारी अच्छी होने की दशा में है और शीघ्र ही अच्छे हो जाओगे। बीमार यदि पूछे कि कितने दिन में अच्छा हो जाऊँगा, तो गोल शब्दों में उत्तर दो 'बहुत

जल्द अच्छे हो जाओगे।' कोई समय नियत कर देना ठीक नहीं, क्योंकि यदि उतने दिन में लाभ नहीं हुआ, तो सब को अश्रद्धा और निराशा होती है। अपना कष्ट रोगी को स्वयं कहने दो यदि वह व्यर्थ बातें कर रहा हो, तो भी उसे झिड़को मत। उसकी बातों की ओर पूरा ध्यान दो और किसी तरह यह विदित मत होने दो कि तुम उसकी बीमारी को साधारण समझकर उपेक्षा कर रहे हो। कुछ अत्युक्ति कह रहा हो तो खंडन मत करो। उसे न तो झूठा साबित करो और न चिढ़ाओ। आश्वासन दो कि आगे से तुम्हारी कठिनाई दूर हो जाएगी। वह कोई असंभव माँग कर रहा हो तो बहुत ही प्रेमपूर्वक शब्दों में उस वस्तु को तुच्छ और उपेक्षणीय करते हुए वर्तमान समय की लाचारी प्रकट करो और उसकी बुद्धि की प्रशंसा करते हुए समझा दो कि तुम बहुत बहादुर हो। इस छोटे-से अभाव को वरदाश्त कर सकते हो।

अपनी दृष्टि रोगी के चेहरे पर रखो। उसकी आँखों से आँखें मिलाओ। जरूरत समझो तो उसके ललाट पर हाथ फिराओ या हलकी चपत जैसी थपकियाँ दो। इससे उसके ऊपर आश्चर्यजनक प्रभाव पड़ेगा।

रोगी को और उसके पास बैठने वालों को कुछ ऐसे उदाहरण सुनाओ जिनमें तुमने उस तरह के रोगियों को अच्छा किया हो। इस विवरण में थोड़ी नमक-मिरच भी मिली रह सकती है। इस वर्णन को बातों-ही-बातों में इस चतुराई के साथ करो कि अपनी शेखी मारने जैसा कुछ प्रतीत न हाने पाए। नम्र शब्दों में 'मैं' शब्द का बिना बार-बार उपयोग किए उस घटना को मनोरंजक ढंग से आसानी से कहा जा सकता है। कोई दूसरा व्यक्ति इस कार्य को कर सके तो और भी अच्छा है। तुम यह ख्याल मत करो कि ऐसा वर्णन करने में दोष है। नहीं, यह तो रोगी के मन को स्थिर करके उस पर श्रद्धा का बीज उगाकर अविश्वास और संदेह दूर करने का एक बहुत अच्छा उपाय है। इसमें बुराई

की कोई बात नहीं। तुम्हारी अनुपस्थिति में कोई इस प्रकार का वर्णन करे, तो सबसे अच्छा होगा। अकसर लोग रोगी के भोजन और रहन-सहन के बारे में कुछ भी ध्यान नहीं देते। बहुत-सी ऐसी मूर्खताएँ-धारणाएँ लोगों में फैली हुई हैं, जिनसे रोगी साधारण सुविधाओं से भी वंचित हो जाता है। "उपवास करोगे तो भूख मारी जाएगी" "दूध लोगे तो खाँसी हो जाएगी" "कमरे की खिड़कियाँ खुली रखोगे तो हवा लग जाएगी" "फल खाओगे तो ठंढ सता जाएगी"। इस प्रकार की भ्रांतियों के आगे तुम्हें सिर नहीं झुकाना चाहिए और तर्क एवं प्रमाणों के साथ उन भ्रमों को दूर करते हुए रोगी को साफ हवादार कमरे में रखवाने, बिस्तर स्वच्छ रखने, हैजा आदि को छोड़कर पानी पर्याप्त मात्रा में पीने देने, बिना भूख के भोजन न करने की व्यवस्था करा देनी चाहिए। पेट में मल इकट्ठा हो रहा हो, तो किसी सुगम उपचार से एक-दो दस्त करा देने चाहिए। रोगी को क्या आहार देना चाहिए? इसके संबंध में आजकल बड़ी हानिकारक रूढ़ियाँ फैली हुई हैं, उनसे रोगी को उलटी हानि होती है, तुम्हें आहारशास्त्र का गहरा अध्ययन करके यह जानना चाहिए कि किस प्रकार के रोगी के लिए कैसा आहार उचित है? सुपाच्य, सरस, सुस्वादु—ये तीन गुण भोजन में अवश्य होने चाहिए।

प्राण चिकित्सा विज्ञान यद्यपि सबसे प्राचीन चिकित्सा प्रणाली है, पर उसका वर्तमान स्वरूप पश्चिमी पंडितों के अनुभवों के आधार पर ही बन सका है। लोगों के लिए यह नई चीज हो सकती है। इसलिए तुम्हारे लिए यह आवश्यक है कि प्राणशक्ति क्या है? उसका दूसरों पर किस प्रकार प्रयोग हो सकता है? और उससे रोग कैसे दूर किए जा सकते हैं? इस विज्ञान को संक्षेप में या विस्तारपूर्वक जब जैसा अवसर देखो लोगों को समझाते रहो। जिससे उन्हें वास्तविक सत्य का परिचय हो जाए और वे तुम्हें भी दूसरे ढोंगी और धूर्तों की श्रेणी में न गिनने लगें।

कहते हैं कि बीमारियों की जड़ पेट में रहती है। इसलिए बीमार का सर्वप्रथम उपाय जो चिकित्सक को करना है वह यह है कि पेट की सफाई करे। यदि पेट में पुराना मल जमा हो तो ऐनिमा की सहायता से गुदा में साबुन की बत्ती लगाकर या अन्य किसी सीधे-सादे उपचार से एक-दो दस्त करा देने चाहिए। पेट हलका होने पर रोगी को बड़ी मदद मिलती है। यदि मेदा थक गया हो और आराम चाहता हो तो रोगी को उपवास कराने चाहिए। जब तक भूख न लगे रोगी को भोजन न दिया जाए। पर्याप्त मात्रा में पानी पिलाते रहने से कुछ हानि नहीं होती और उपवास समाप्त होने पर दूना फायदा पहुँचता है। जरूरत के वक्त पानी के साथ दूध या फलों का रस मिलाया जा सकता है। यदि पेट में कोई खराबी नहीं है, तो रोगी के भोजन में पतली और हलकी चीजें होनी चाहिए। दूध, फल या उबली हुई सब्जियों पर रहा जा सके, तो बहुत ही अच्छा अन्यथा दलिया, साबूदाना जैसी पतली और सुपाच्य वस्तुएँ देनी चाहिए। कड़ा, सूखा और नीरस भोजन बीमार के लिए एक प्रकार का भार होता है और पेट में पहुँचकर, वह उलटा रोगी को खाता है। पेट में कुछ भी डालते समय उसमें पर्याप्त मात्रा में लार मिलाने के लिए रोगी को अच्छी तरह समझा देना चाहिए। उसे पानी पीना हो तो धीरे-धीरे चूसकर पिए। एक गिलास पानी पीने में कम-से-कम दस मिनट लगाने चाहिए। इसी प्रकार भोजन को जितना हो सके चबाकर खाना चाहिए। दाँतों से भोजन इतना पिस जाए और थूक से पतला हो जाए कि निगलते समय गले को जरा-सी भी कठिनाई मालूम न पड़े, रोगी को पानी यथेच्छ मात्रा में पीने देना चाहिए।

किस रोग में क्या उपचार ?

इस पुस्तक में प्राणोपचार की अनेक क्रियाओं का वर्णन है, जिनका विभाजन इस प्रकार किया जा सकता है।

(१) मार्जन—(अ) संपूर्ण मार्जन, (ब) तिर्यक मार्जन, (स) बेधक मार्जन, (द) वृत्त मार्जन, (य) स्पर्श मार्जन, (र) प्रगाढ़ स्पर्श मार्जन (ल) थपकी मार्जन (व) अंगुलि प्रसारण।

(२) श्वासोच्छ्वास—(अ) उष्ण श्वास, (ब) शीतल श्वास, (स) जल मंत्रित करना, (द) तेल मंत्रित करना, (य) अमृत श्वास।

(३) स्पर्श क्रिया—यह दस प्रकार की है।

(४) कंप उपचार—यह एक ही प्रकार का है।

(५) वस्तुएँ मंत्रित करना—(अ) फलालेन, (ब) कागज, (स) द्रव पदार्थ, (द) औषधियाँ, (य) अन्य उपचार।

(६) मानसिक चिकित्सा—यह भी एक ही प्रकार की है।

इस प्रकार कुल मिलाकर तीस प्रकार की चिकित्सा विधियाँ बतायी गई हैं। इनका उपयोग करने से पूर्व तुम्हें यह जान लेना चाहिए कि प्राण चिकित्सा और चिकित्साओं की भाँति नहीं है। इसलिए इन तीस प्रणालियों को दवाओं की भाँति हर एक रोग के लिए अलग-अलग नहीं बाँटा जा सकता। जैसे—ज्वर, खाँसी, दस्त आदि रोगों की वैद्य डॉक्टरों के पास अलग-अलग दवाएँ रहती हैं, वैसी इस चिकित्सा में नहीं हो सकतीं। यह तीस उपचार तो तीस तेज हथियार हैं, जो हर एक रोग पर स्थिति भेद से चलाए जा सकते हैं। कोई शत्रु बहुत दूर हो, तो उसके लिए बंदूक की आवश्यकता होती है। नजदीक हो तो भाला-बरछी काम देता है और बिलकुल ही नजदीक आ जाए, तो छुरी चलाने की आवश्यकता होती है। जैसे हर शत्रु के लिए अलग-अलग हथियार रखने की जरूरत नहीं, उसी प्रकार प्राण चिकित्सा में हर मर्ज की अलग-अलग दवाइयाँ नहीं हैं। रोग किस स्थिति में है, कहाँ है, और क्या उपद्रव कर रहा है? इन बातों पर ध्यान रखते हुए इलाज आरंभ करना चाहिए।

अब तक जितने रोग जाने जा सके हैं, उनकी संख्या सात हजार से ऊपर है फिर भी यह संख्या पूरी नहीं है। अभी और भी अनेक किस्मों का पता लगाया जा रहा है। हमारी समझ में यह अनंत हैं। रोग इतने हो सकते हैं, जिनकी गिनती करना असंभव है। ऐसी दशा में उन सबके नाम याद करना, लक्षण रटना व्यर्थ है। प्राण चिकित्सक के पास इतना फालतू वक्त नहीं कि वह हर पेड़ के पत्ते गिनता फिरे। उसे मूल स्थान का पता लगाना है और उसी का इलाज करना है। शरीर में दूषित पदार्थों का भर जाना ही रोग है। मिथ्या आहार-विहार के कारण यह दूषित पदार्थ अपने अंदर से भी उत्पन्न हो सकता है और बाहर से भी आ सकता है। यह विजातीय द्रव्य शरीर की स्वस्थ जीवन शैली को दबाकर समस्त देह या उसके किसी अंग को पीड़ित कर देता है। इस उत्पीड़न से स्वस्थ अंग दु:ख पाते हैं और आँसू बहाते हैं साथ ही अपना काम पूरा करने से लाचार हो जाते हैं। यही रोग का बाहरी लक्षण है। पिसने की उस पीड़ा को दरद, आँसू बहाने को मलों का—दस्त, कफ, कीचड़, रक्त, मूत्र, वमन, स्वेद आदि का अधिक बहना और असमर्थता को लंघन, लकवा, कमजोरी आदि नामों से पुकारते हैं। अब तुम समझ गए होगे कि समस्त रोगों का कारण एक ही है और उन सबके लक्षण एक-से ही हैं, चाहे वे अलग परिस्थितियों के कारण अलग-अलग सूरतों में भले ही दिखाई देते हों। इन सब रोगों का इलाज भी एक ही है अर्थात दूषित पदार्थों को खींचकर बाहर फेंकना और स्वस्थ प्राण को रोगी की मदद के लिए प्रेषित करना। इन दो संज्ञाओं के अंदर ही ये तीसों उपचार आ जाते हैं।

समस्त शरीर के नाड़ी जाल का संबंध मेरुदंड से है। देह में कभी भी विकार हो उसकी प्रतिच्छाया मेरुदंड में जमा होने लगती है। पैर में फोड़ा होने पर जाँघों के जोड़ पर गिल्टियाँ उठ आती हैं, उसी तरह देह में कहीं भी विकार होने पर रीढ़ के आस-पास गाँठ, कड़ापन, शीतलता, उष्णता, पिलपिलापन आदि चिह्न प्रकट हो

जाते हैं। बिजली के तार को बीच में, सिरे पर, इधर-उधर या कहीं भी छुओ एक ही असर होगा, उसी प्रकार रीढ़ का उपचार करने पर भी पीड़ित स्थान पर असर होगा। पिछले पृष्ठों पर बताया जा चुका है कि कड़ेपन, सूजन के लिए श्वासोच्छ्वास, गाँठों के लिए स्पर्श, ऐंठन के लिए कंप, सरदी के लिए मालिश और गरमी के लिए मार्जन अच्छा उपचार है। कौन-सा कंप? कौन-सा मार्जन? कौन-सा श्वास? इस प्रश्न का उत्तर किसी निश्चयात्मक रूप से नहीं दिया जा सकता। यह हर व्यक्ति के लिए अलग-अलग हो सकते हैं। जिस स्थान में रोग है, वहाँ भी उपचार करना आवश्यकीय है। किस प्रयोग को कब करें, यह जानने के लिए इन उपचारों के गुण और शक्ति की जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए। उसी के अनुसार समस्त रोगों का उनकी विभिन्न स्थितियाँ देखते हुए उपचार करना चाहिए।

निवारण वाले उपचार—वृत्त मार्जन, थपकी मार्जन, संपूर्ण मार्जन, तिर्यक मार्जन, शीतल श्वास, कंप उपचार, वर्तुल स्पर्श, चिकोटी स्पर्श, खोखला स्पर्श। ये नौ उपचार शरीर की नौ वस्तुओं को खींचकर बाहर करने वाले हैं।

हर रोगी की तीन स्थितियाँ होती हैं—(१) रोग का आरंभ, (२) मध्यम, (३) बढ़ा हुआ रूप, उसी अनुसार इसमें से उपचार भी चुन लेने चाहिए। रोग यदि शुरू हो रहा हो तो (१) संपूर्ण मार्जन, (२) शीतल श्वास, (३) वर्तुल श्वांस का उपयोग करना चाहिए। बीमारी बढ़ गई हो और आरंभ के दिनों में प्रकट रूप से दिखाई देने लग गई हो तो (१) तिर्यक मार्जन, (२) शीतल श्वास, (३) चिकोटी स्पर्श और खोखला स्पर्श काम में लाना चाहिए। यदि बीमारी पूरे जोर पर हो और पुरानी हो चली हो तो (१) तिर्यक मार्जन, (२) कंप उपचार, (३) वर्तुल स्पर्श का प्रयोग करना चाहिए। इन विधियों से शरीर के दूषित मादा बाहर निकलते हैं।

प्राण प्रेरित करने वाले उपचार—बेधक मार्जन, स्पर्श मार्जन, प्रगाढ़ मार्जन, थपकी मार्जन, उँगलियाँ प्रसारण, उष्ण श्वास, अमृत श्वांस हथेलियाँ रगड़ने का स्पर्श (नं० १) झुकी उँगलियों का स्पर्श (नं० २) पूरे हाथ का स्पर्श, (नं० ३) गूँदने का स्पर्श, (नं० ५) घिसने का स्पर्श, (नं० ७) कूटने का स्पर्श, (नं० ८) थपकी का स्पर्श, (नं० ९) ये चौदह उपचार प्राण प्रेरक हैं। आरंभ की अवस्था में (१) बेधक मार्जन, (२) अमृत श्वास, (३) झुकी उँगलियों का स्पर्श, (४) थपकी स्पर्श काम में लाने चाहिए। मध्यम अवस्था में (१) स्पर्श मार्जन, (२) थपकी मार्जन, (३) उष्ण श्वास, (४) झटके का स्पर्श, (५) गूँदने का स्पर्श काम में लाना उचित है। बढ़ी हुई दशा में (१) प्रगाढ़ स्पर्श मार्जन, (२) अंगुलि प्रसारण, (३) पूरे हाथ का स्पर्श, (४) हथेलियाँ रगड़ने का स्पर्श, (५) घिसने का स्पर्श प्रयोग करना चाहिए।

दोनों प्रकार के उपचार—कुछ उपचार ऐसे हाते हैं, जो मंत्रबल के अनुसार निवारण और प्राण प्रेरक दोनों प्रकार के काम कर सकते हैं। फलालेन, कागज, जल, तेल, घृत, दूध, ओषधि आदि को जिस प्रकार जिस जिस शक्ति के अनुसार मंत्रित किया जाएगा, वह उसी प्रकार का गुण देगी। 'अन्य उपचार' हैडिंग नीचे जिन क्रियाओं का वर्णन है वे तथा 'मानसिक उपचार' यह भी इसी प्रकार दोनों तरह का काम कर सकती है।

मंत्रित दूध निर्बल रोगियों और बालकों के लिए दिया जाता है। तेल को आवश्यकतानुसार सिर, जोड़, कमर या समस्त शरीर में लगाते हैं। घृत या मक्खन मलहम की तरह जले या कटे अंगों पर लगाया जाता है। जल ओषधि की तरह दिन में दो-दो तोले की मात्रा में अथवा आवश्यकतानुसार ज्यादा-कम मात्रा में देना चाहिए। फलालेन या कागज एक बार में आधा घंटे से अधिक शरीर पर नहीं रखनी चाहिए और दोबारा रखने

के लिए बीच-बीच में एक-एक घंटे का अवकाश अवश्य होना चाहिए। औषधियाँ लोहे के खरल में कदापि न बनाई जाएँ। पत्थर के खरल में कूट-पीसकर उन्हें छाया में सुखाना चाहिए। इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि मंत्रित कर देने के बाद वह वस्तु हाथ या धातु की बनी किसी वस्तु से न छुए। मानसिक चिकित्सा में सूचनाओं, मंत्रों के अनुसार असर भी पड़ता है, परंतु इस प्रकार के शब्द न कहने चाहिए कि "तुम्हारा रोग दूर हो रहा है" वरन उसे इस प्रकार कहना चाहिए कि "तुम अच्छे हो रहे हो" सूचना में (मंत्रों में) निषेधात्मक शब्द काम में न आएँ।

हर एक मर्ज में चाहे वह कोई और किसी प्रकार का ही रीढ़ का और स्थानीय पीड़ित स्थान का उपचार करो। आवश्यकता हो तो समस्त शरीर का उपचार करो। बीमारी को देखें कि वह अभी-अभी प्रकट हो रही है? मध्यम दशा में है? या पूरे वेग पर है? उसी के अनुसार उपचार करो। पुस्तक के आधार पर कोई चिकित्सा पूरी नहीं हो सकती, उसमें अपनी विशेष बुद्धि को काम में लेना चाहिए और आवश्यकतानुसार इनमें से या कोई नया प्रयोग बनाकर काम में लाना चाहिए। अपने अनुभव और विशेष बुद्धिबल से तैयार की गई चिकित्सा से, सदैव सफलता ही प्राप्त होती है।

प्राण चिकित्सा के प्रमुख उपचार

(१) मार्जन

प्राण-शक्ति द्वारा चिकित्सा करने वालों को यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि बीमारियाँ जब शरीर में प्रवेश करती हैं तो उनकी गति बाहर से भीतर की ओर तथा नीचे से ऊपर की ओर होती है। लेकिन जब वह अच्छी होने को होती है, तो उनकी चाल अंदर से बाहर की ओर तथा ऊपर से नीचे की ओर हो जाती है। डॉक्टरों ने इस बात को बहुत खोज और प्रमाणों के साथ सिद्ध किया

है। रोगी के कीटाणुओं की चाल किस तरफ है, इस बात की परीक्षा करके यह जान लिया जाता है कि इस समय बीमारी का प्रकोप हो रहा है या वह अच्छी होने जा रही है।

यह भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि शरीर में रहने वाली प्रकृतिदत्त जीवनीशक्ति ही संपूर्ण रोगों को दूर करती है कोई भी उस जीवनीशक्ति को थोड़ी-सी मदद पहुँचाकर उसे इस योग्य बनाता है कि वह बीमारी से लड़ सके और दुश्मन को अपने घर से निकाल बाहर करे। यह समझना गलत है कि कोई दवा केवल अपनी शक्ति से ही रोग को दूर कर सकती है। जिस आदमी की जीवनीशक्ति निर्बल हो जाती है, उसे बहुत बढ़िया दवाएँ देने पर भी बहुत दिनों में और मुश्किल से लाभ होता है। कुष्ठ, दमा, तपैदिक, आतिशक आदि कष्टसाध्य या असाध्य रोगों में सर्वोत्तम और कीमती से कीमती इलाज भी बेकार साबित होते हैं।

प्राण चिकित्सक अपनी प्राणशक्ति को रोगी की जीवनी-शक्ति की मदद के लिए भेजता है। पिछले पृष्ठों में बताया जा चुका है कि प्राणशक्ति भी एक प्रकार की बिजली है और उसमें बिजली के दोनों गुण मौजूद हैं। वह अपने विकर्षण (Positive) गुण के अनुसार फेंकने की क्रिया करती है और आकर्षण (Negative) गुण के अनुसार खींचती है। चिकित्सक को रोगों की स्थिति के अनुसार इन दोनों ही क्रियाओं को अलग-अलग अवसरों पर काम में लाना पड़ता है। रोगों को खींचकर बाहर फेंकने के लिए आकर्षण शक्ति और रोगी की जीवनीशक्ति को मदद देने के लिए विकर्षण शक्ति का उपयोग होता है।

मार्जन क्रिया (Pass) उपर्युक्त दोनों प्रकार के होते हैं। खींचने की शक्ति वाले निवर्तक मार्जन (De-Mesmerising Pass) और प्रवेश करने की शक्ति वाले प्रवर्तक मार्जन (Mesmerising Pass) कहे जाते हैं। इन पासों के द्वारा चिकित्सक की प्राणशक्ति वैसा ही

असर करती है, जैसा हाथ-पावों द्वारा उसकी सहायता की जा सकती है।

मार्जन हाथों द्वारा होते हैं। मनुष्य की हथेली में विकर्षण और हथेली की पीठ में आकर्षण शक्ति प्रचुर परिमाण में रहती है। इसलिए प्रवर्तक मार्जन करने के लिए हथेली का और निवर्तन मार्जन करने के लिए हथेली की पीठ का उपयोग किया जाता है। प्रवर्तक मार्जन नीचे से ऊपर की ओर तथा निवर्तक मार्जन ऊपर से नीचे की ओर दिए जाते हैं।

मार्जन की तैयारी

रोगी को बैठाकर-लिटाकर या जैसी स्थिति में रखकर मार्जन करना है, उस स्थिति में उसे कर लो। तुम सीधे खड़े हो जाओ ओर अपने हाथों को बिलकुल ढीला करके लटका दो। अब उन्हें ढीला करके आगे-पीछे झुलाओ। पहले धीरे-धीरे फिर क्रमशः तेजी बढ़ाते हुए जल्दी-जल्दी झुलाना चाहिए। ऐसा करने से थोड़ी-ही देर में तुम्हारी उँगलियों के छोर झनझनाने लगेंगे। उनमें कुछ गुदगुदी-सी पैदा होगी और गरमी बढ़ जाएगी। अब तुम्हारे हाथ इस दशा में मार्जन करने लायक हो गए। समयानुसार जैसा भी मार्जन तुम्हें करना है, इन हाथों से कर सकते हो। इस प्रकार की तैयारी एक ही रोगी के उपचार करने योग्य होती है, यदि दूसरे रोगी का इलाज करना हो, तो दोबारा फिर इसी प्रकार तैयारी करनी चाहिए।

मार्जनों के अनेक भेद हैं। ऊपर प्रवर्तक और निवर्तक दो भेद बताए जा चुके हैं। इनमें से हर एक के कई-कई भेद हैं। आगे उन्हीं पर प्रकाश डाला जाता है।

पास शुरू करते समय यूँ ही सीधे-सीधे ढंग से हाथ नहीं ले पहुँचना चाहिए, वरन मुट्ठी बाँधकर हाथ ले जाना चाहिए और उसे उस समय खोलना चाहिए, जब पास की क्रिया आरंभ करनी हो। एक पास समाप्त करके दूसरा पास करने के लिए जब ले जाया जाए, तब उस बीच के समय में भी मुट्ठी बाँध लेनी चाहिए। पास

पूरा होने पर हर बार हाथ उसी तरह झाड़ देना चाहिए जैसे गंदे पानी से भीग जाने पर हाथ को झाड़ देते हैं। इसमें भूल नहीं होनी चाहिए, वरना रोगी की पीड़ा चिकित्सक को लग सकती है। धीरे-से हाथ झाड़ देना चाहिए, इतना जोर लगाना जिससे हाथ को तकलीफ हो, उचित नहीं। तुम्हारे नाखून अच्छी तरह कटे हुए साफ दिखाई देने चाहिए। मार्जनों में विद्युत-प्रवाह के निकलने का मुख्य मार्ग उँगलियों के छोर हैं, यदि नाखून बढ़े हुए हों, तो वह प्रवाह रुकेगा और रोगी पर पूरा असर न होगा।

हर एक मार्जन के पश्चात रोगी के शरीर में से आकाशतत्त्व (ईथरिक मैटर) बाहर निकला करता है। इसे पूरी तरह बाहर न फेंका जाए, तो चिकित्सक की उँगलियों में वह लगा रह जाएगा और उसे भी वह बीमारी पैदा कर सकता है। असावधान चिकित्सक अकसर असावधानी के कारण रोगी का रुग्ण द्रव्य अपने ऊपर डाल लेते हैं और खुद उस बीमारी को भोगते हैं।

किसी समतल स्थान पर फैली हुई वस्तु को यदि तुम उँगलियों के सहारे आगे को घसीटो, तो उँगलियों को झुकाकर टेढ़ा-सा कर लेना पड़ेगा। पास करते समय भी इसी प्रकार उँगलियों को जरा-सा झुका लेना पड़ता है। यदि रोग कठिन हो और रोगी बड़ी उम्र का हो, तो सब उँगलियों को आपस में सटा लेना चाहिए, इससे सब उँगलियों की शक्ति सम्मिलित होकर बहुत प्रबल हो जाती है, किंतु यदि किसी साधारण रोग या बालक के लिए पास देना हो तो उँगलियों को थोड़ा खुला रहने देना चाहिए, इससे उपचार मध्यम श्रेणी का या हलका रहेगा। अँगूठों को मोड़कर हथेली से सटा लेना चाहिए, किंतु यदि दोनों हाथों की शक्ति को सम्मिलित करके बहुत प्रबल बनाना हो तो दोनों अँगूठों को एक-दूसरे के ऊपर रखकर आपस में सटा देना उचित है। उँगलियों को रोगी के कुछ फासले पर रखना चाहिए। यह फासला आवश्यकतानुसार आध इंच से लेकर दो इंच तक का हो सकता है।

मार्जन करते समय रोगी का समस्त शरीर या पीड़ित स्थान को नंगा रखना चाहिए। कपड़े से ढके रहने पर असर कम होता है, किंतु कई बार इसका अपवाद भी होता है। स्त्रियों के पवित्र अंगों को वस्त्र रहित नहीं किया जा सकता। बहुत निर्बल रोगियों को खराब मौसम में नंगा नहीं करना चाहिए। ऐसी दशा में एक हलके वस्त्र से शरीर को ढक देना चाहिए, किंतु बटन, घुंडी, पेटी या धोती की गाँठ लगी रहना उचित नहीं। रेशमी या ऊनी वस्त्र को प्रयोग के समय शरीर पर कदापि न रखना चाहिए। उन्हें रखने से प्राण उपचार नहीं हो सकता।

संपूर्ण मार्जन (Longitudinal or Long Pass)—यह पास बहुत प्रयोग होता है। रोगी को मेज, तख्त या किसी ऊँची जमीन पर पीठ के बल चित्त लिटाकर शिर से पाँव तक यह पास दिया जाता है। प्रयोक्ता बगल में खड़ा हो जाता है और जितनी देर जरूरत समझता है मार्जन करता रहता है। हथेली रोगी की तरफ होती है।

तिर्यक मार्जन (Transures Pass)—यह तिरछे पास केवल छाती, पीठ और पेट पर दिए जाते हैं। दाहिनी तरफ से शुरू करके बाँई ओर से हाथ ले जाते हैं। हथेली नीचे की ओर रखते हैं। ऊपर से नीचे की ओर हाथों को उठाना चाहिए।

बेधक मार्जन—दाहिने हाथ की तर्जनी या आवश्यकतानुसार दो-तीन उँगलियों को रोगी के शरीर से छह इंच दूर रखकर बर्मे की तरह घुमाओ मानो तुम बीमारी की देह में छेद कर रहे हो।

निवृत्त मार्जन—निवर्तक पास में हथेली ऊपर को अर्थात अपनी ओर रखते हैं। रोगी की ओर हथेली की पीठ रहती है और हाथों को प्रवृत्तक पासों की अपेक्षा उलटी दिशा में ले जाना चाहिए।

स्पर्श मार्जन (Frictions or Megnatic Frictions)—यह छूता हुआ पास है। रोगी के शरीर को उँगलियों से छूते हुए यह पास किया जाता है।

प्रगाढ़ स्पर्श मार्जन(Kneading Pass)—यह पास किसी स्थान विशेष पर किया जाता है। उस जगह को उँगलियों के पोरों से आटे की तरह गूँधते रहो।

थपकी मार्जन (Strocking Pass)—किसी खास स्थान को केवल तर्जनी या अधिक उँगलियों से थपथपाया जाता है। धीरे-धीरे पीड़ित स्थान पर हथौड़ी की तरह उँगलियों की चोट लगाते हैं।

इससे बहुत उत्तेजना होती है, चैतन्यता आती है और वह स्थान उष्ण हो जाता है।

अंगुलि प्रसारण-दाहिने हाथ की पाँचों उँगलियों को फैला दो। हर उँगली के बीच में थोड़ा फासला रहे। उँगलियों के छोरों को पीड़ित स्थान की तरफ छह इंच के फासले पर रखो। कुछ मिनटों तक इस प्रकार उँगली के छोरों द्वारा प्राणबल प्रेरित करने से बड़ा लाभ होता है।

(२) प्राणमय श्वासोच्छ्वास

श्वासोच्छ्वास का प्रभावशाली प्राणोपचार संसार में चिरकाल से प्रचलित है। अर्नोव का कथन है—मिश्रवासी इस विधि को अन्य सभी उपचार पद्धतियों से श्रेष्ठ समझते थे। मार्कलिन ने एक कथा में लिखा है—एक मरणासन्न बालक में एक स्त्री ने अपनी श्वास फूँकी फलस्वरूप वह तुरंत ही स्वस्थ हो गया। सन् १६५० ई० में बोरेल नामक सज्जन ने भारत तथा अन्य स्थानों में श्वासोच्छ्वास द्वारा असाध्य रोगियों को अच्छा किया जाते देखा। स्पेननिवासी इंसा मेडोर रोगियों को श्वास और लार के उपचार से अच्छा करते थे। भारत की झाड़-फूँक अब भी प्रसिद्ध है। जगह-जगह अब भी ऐसे तांत्रिक पाए जाते हैं, जो फूँक मारकर जहरीले जानवरों के विष उतारने या रोगियों को ठीक-अच्छा करने के चमत्कार करते हैं।

संसार का जर्रा काँप रहा है। विज्ञान बतलाता है कि प्रकृति के अत्यंत सूक्ष्म परमाणु बराबर काँपते रहते हैं। उनकी यह

कंपन- क्रिया ताल रूप से होती है। विश्व की समस्त हलचलों का मूल स्रोत यह 'ताल' ही है। इधर से उधर उड़ते फिरने वाले और क्षणभर भी स्थिर न रहने वाले अणु इस तालयुक्त कंपन के प्रभाव से इतने शक्तियुक्त होते हैं कि वह प्रकृति के क्रीड़ा-क्षेत्र में नित नए अद्‌भुत रूपों में प्रकट और लय होते रहते हैं।

एक क्रिया का एक ठीक नियमानुसार बार-बार दोहराया जाना ही 'ताल' है। समुद्र में ज्वार-भाटा उठना, ग्रहों का घूमना, दिन के बाद रात का आना, सांस का लेना-छोड़ना, दिल का धड़कना, रक्त का दौरा ये सब बातें ताल स्वरूप हैं। यह ताल बंद हो जाए तो विश्व की लीला ही समाप्त हो जाएगी।

विज्ञान द्वारा सिद्ध हो चुका है कि किसी बाजे के बहुत देर तक एक ही ताल पर बजाया जाए, तो उसका परिणाम भयंकर हो सकता है। फौजी परेड के समय सिपाही 'लैफ्ट' 'राइट' की ध्वनि पर कदम मिलाते हुए चलते हैं। इसका अद्‌भुत परिणाम होता है। यह ध्वनि सिपाहियों में एक तरह की उत्तेजक बिजली पैदा करके उनमें जोश भरे रहती है। किन्हीं नदी आदि के पुलों पर से जब पैदल पलटन निकलती है, तो समध्वनि से तालयुक्त कदम मिलाकर चलना बंद कर देते हैं और बिखरी हुई चाल से सिपाहियों को चलना होता है, क्योंकि कदम मिलाकर चलने से कंपन इतने भारी हो सकते हैं कि उस पुल और पलटन दोनों को ही ले बैठें।

इतना जान लेने के बाद तुम्हें मान लेना चाहिए कि संसार की शक्ति 'ताल' के अंतर्गत है। तुम उस ताल की सहायता से अपना जीवनक्रम चला रहे हो। यदि उस तालशक्ति का उपयोग कर सको तो उसके द्वारा बहुत काम कर सकते हो। योगी लोगों ने प्राणायाम को इतना ऊँचा महत्त्व इसीलिए दिया है। "साँस की साधारण कसरत से क्या हो सकता है?" यह कहकर स्थूल बुद्धि के लोग

प्राणायाम का मजाक उड़ाते हैं, किंतु सच्चा योगी इसी महान क्रिया के अवलंब पर प्रकृति-शक्ति के अनंत प्रवाह से अपना संबंध स्थापित करता है और जो चाहता है, भरपूर प्राप्त करता है।

इस अध्याय में तुम्हें यह सीखना है कि तालयुक्त श्वास-प्रश्वास क्रिया करके कैसे वह प्राणशक्ति प्राप्त की जा सकती है? जो रोगों का निवारण करने योग्य हो। आगे ऐसा ही एक अभ्यास बताया जाता है, जिसका कुछ दिन अभ्यास करके उस रोग परिहारक शक्ति को प्राप्त किया जा सकता है।

अखिल विश्व में असंख्य ताल-ध्वनियाँ व्याप्त हैं और उनकी शक्तियों की सीमा एवं संभावनाएँ भिन्न-भिन्न हैं। तुम्हारे काम के लिए अपने हृदय की धड़कन की ताल बहुत उपयुक्त है, क्योंकि तुम्हारा समस्त शरीर इसी ध्वनि से गूँज रहा है और आसानी के साथ इससे लाभ उठाया जा सकता है।

अपनी दाहिने हाथ की नाड़ी पर बाएँ हाथ की तर्जनी, मध्यमा और अनामिका उँगलियाँ इस प्रकार रखो मानो तुम कोई वैद्य हो और अपनी नाड़ी की परीक्षा कर रहे हो। नाड़ी की चाल को ध्यानपूर्वक उँगलियों पर अनुभव करो और १, २, ३, ४, ५, ६, का क्रम बाँधकर उसकी चाल बराबर गिनो। यह बतला चुके हैं कि शब्द को नियत क्रम से बार-बार दोहराया जाए तो एक ताल या ध्वनि उत्पन्न हो जाती है। यदि तुक तीन या चार और अधिक कम-बढ़ में 'न' संख्या में 'न' या किसी शब्द को बार-बार कहो तो एक ध्वनि बँध जाएगी। 'न' 'न' 'न' 'न' 'न' 'न' 'न' 'न' 'न'। इन्हीं शब्दों को कुछ अधिक बार एक क्रम से उच्चारण करो। एक गीत-सा बन जाएगा। यही बात नाड़ी के बारे में होगी। उँगलियों को नाड़ी पर रखकर ध्यानपूर्वक उस पर चित जमाने से १, २, ३, ४, ५, ६,। १, २, ३, ४, ५, ६, का समा बँध जाएगा और एक विशेष प्रकार की ताल अपने अंदर उत्पन्न होने का अनुभव होगा।

साधारणत: लोग ६ बार नाड़ी धड़कने के समय में एक साँस लेते हैं। अभ्यास द्वारा यह संख्या बढ़ाई जा सकती है। तुम्हारा अभ्यास इस प्रकार का होना चाहिए कि श्वास खींचने (पूरक) और श्वास छोड़ने (रेचक) में नाड़ी की धड़कन बराबर हों। श्वास भर रखने और छोड़ देने के बाद पेट खाली रखने (कुंभक) की संख्या उससे आधी हो। जब श्वास का क्रम बढ़ाओ तब कुंभक की मात्रा में भी इसी अनुमान से वृद्धि होनी चाहिए।

साधारणत: एक सप्ताह तक दिन में कई बार १, २, ३, ४, ५, ६ की नाड़ी धड़कन का अनुभव करने से भीतर एक ताल-सी बँधने लगती है। तब यह प्राणायाम शुरू कर देना चाहिए।

(१) प्रात:काल एकांत स्थान में पूर्व की ओर मुँह करके आसन पर आराम से बैठ जाओ। मेरुदंड बिलकुल सीधा रखो।

(२) नाड़ी की धड़कन छह बार गिनते हुए धीरे-धीरे साँस को भीतर खींचो।

(३) तीन धड़कन तक साँस को रोक रखो।

(४) छह धड़कनों में साँस को धीरे-धीरे बाहर निकाल दो।

(५) तीन धड़कनों तक बिना साँस के रहो।

आरंभ में कुछ ही मिनट इसे करो आसानी से जब तक करते रह सको करो। जब थकान आने लगे या कुछ घबराहट-सी प्रतीत होने लगे, बंद कर दो। धीरे-धीरे अभ्यास बढ़ाकर एक साँस के लिए १५ धड़कन तक की संख्या बढ़ाई जाती है। साथ ही कुंभक की संख्या में उसी अनुपात में वृद्धि करते चलना चाहिए। आरंभ में साँस को लंबी करने का प्रयत्न मत करो। छह बार से अधिक तब बढ़ो जब ताल का अनुभव बहुत स्पष्ट होने लगे। यह ताल ही शक्ति का केंद्र है।

जब ताल का अनुभव होने लगे तभी समझ लेना चाहिए कि हमारी श्वासोच्छ्वास क्रिया रोग निवारक शक्ति से संयुक्त हो गई। उस शक्ति का परिणाम ताल की स्पष्टता के ऊपर निर्भर है।

कुछ रोग निवारक श्वास क्रियाएँ

बीमारी को प्राणयुक्त श्वांसोच्छ्वास से प्रभावित करने की कई विधियाँ हैं। नीचे उसमें से कुछ का वर्णन किया जाता है।

उष्ण श्वास—बीमार के पीड़ित अंग पर एक नया और बहुत हलका कपड़ा फैला दो। नाक से साँस खींचो और मुँह से उस कपड़े पर फूँक मारो। फूँक मारते समय मुँह ऐसे कर लेना चाहिए जैसे सीटी या वंशी बजाते समय कर लिया जाता है। पीड़ित स्थान से मुँह को छह इंच से लेकर एक फुट तक दूर रखना चाहिए।

शीतल श्वास—उष्ण श्वास की तरह यह क्रिया भी की जाती है। अंतर केवल इतना होता है कि फूँक मारते समय जीभ को उलटी करके तालू से सटा लेते हैं।

जल मंत्रित करना—उपर्युक्त शीतल और उष्ण श्वास क्रियाएँ चिकित्सक की उपस्थिति में ही हो सकती हैं किंतु बहुत-से समय ऐसे होते हैं, जब हर वक्त रोगी और चिकित्सक एक साथ नहीं रह सकते। तब मंत्रित जल ही सबसे सरल उपाय सिद्ध होता है। इसकी कई विधियाँ हैं—

(१) एक काँच के गिलास में स्वच्छ जल भरकर उसे बाएँ हाथ की हथेली पर रखो और उसी हाथ के अँगूठे उँगलियों को ऊँचा उठाकर गिलास को पकड़ लो। उनके दाहिने हाथ की उँगलियों को गिलास के मुँह के पास एक इंच के फासले पर बाँई ओर लाओ। जिस रोग को जिस तरह अच्छा हुआ देखना चाहते हो उसकी दृढ़ भावना करते हुए उँगलियों को पानी के ऊपर पाँच-सात बार झड़क दो।

(२) बाएँ हाथ में जल का भरा हुआ काँच का गिलास पकड़ो। उसे मुँह से छह इंच की दूरी पर रखो और उष्ण श्वास या शीतल श्वास जो देना चाहते हो उसी क्रिया के अनुसार सीटी की तरह मुँह बनाकर पानी में फूँक मारो।

(३) बाएँ हाथ में गिलास लो और दाहिने हाथ को मुट्‌ठी बंद करके कंधों पर ले जाओ। वहाँ से मुट्‌ठी को लाओ और पानी के ऊपर चार इंच दूरी पर मुट्‌ठी को इस प्रकार झड़कते हुए खोलो मानो उसमें कोई डेला रखा हुआ था, जिसे तुमने पानी में फेंक दिया, ऐसा पाँच-से-दस बार करना चाहिए। यदि जल को उष्ण स्वभाव का बनाना है, तो यह मुट्‌ठी फेंकने की क्रिया दाहिने हाथ से करो और शीतल करना है तो बाएँ हाथ से करो।

(४) बोतल या शीशी में जल भरा हो तो गेहूँ या जौ की पोली डंठल उसके पेंदे में डालकर ऊपर से फूँक मारनी चाहिए, जिससे पानी में बुलबुले उठने लगें।

(५) जल पात्र को किसी लकड़ी की वस्तु पर रखकर उसके ऊपर निवर्तक या प्रवर्तक पास देकर उसे उसी गुण का बनाया जा सकता है।

डॉक्टर विलियम डेवी का कथन है कि इन अनेक क्रियाओं में यह क्रिया अधिक उपयुक्त है कि पाँच-सात मिनट तक जल को शीतल या उष्ण श्वांस से मंत्रित कर दिया जाए।

इन मंत्रित जलों के संबंध में यह याद रखना चाहिए कि वह किसी धातु या ऐसी वस्तु से न छू जाए, जिसमें बिजली पार हो जाती है। हाथ से या किसी धातु से यदि मंत्रित जल छू जाए, तो वह बेकार हो जाता है। ४८ घंटे तक जल में मंत्रित शक्ति रहती है, इससे अधिक समय बाद भी जल गुणहीन हो जाता है।

तेल को मंत्रित करना—पीड़ित स्थानों पर लगाने के लिए कई बार तेलों की आवश्यकता होती है। साधारणतः शुद्ध तिली का तेल इस कार्य के योग्य होता है, परंतु सिर पर लगाने के लिए सरसों, ब्राह्मी या आँवले का तेल भी काम में लाया जा सकता है। यूरोपीय देशों में प्राण चिकित्सक इन तेलों में मुँह की लार मिलाते हैं, परंतु भारतीय संस्कृति को ध्यान में रखते हुए यह विधि उचित प्रतीत नहीं होती। पश्चिमी पंडितों का कहना है कि तेल

अधिक स्थूल वस्तु है इसलिए यह साधारण श्वास क्रिया से प्रभावित नहीं होता। डॉक्टर ल्यूविस इस बात को नहीं मानते, उनने सिद्ध किया है कि तेल में रबड़ या किसी के डंठल की नली डालकर उसमें फूँक द्वारा दस मिनट बुलबुले उठाकर उसे पूरी तरह प्रभावित किया जा सकता है और उससे भी उतना ही लाभ होता है, जितना थूक मिलाकर तैयार किए तेल से होता है। इस देश की धार्मिक भावनाओं को ध्यान में रखते हुए डॉक्टर ज्यूविस की विधि ही अधिक उचित प्रतीत हुई है।

अमृत श्वास—इस प्रणाली में कई प्रकार के साधारण उपचार भी किए जाते हैं, जिनसे हर प्रकार के रोगों में लाभ होता है। जो साधक श्वासोच्छ्वास की बारीकियों को नहीं जानते, वे इन क्रियाओं में से किसी को खुशी-खुशी कर सकते हैं।

(१) एक स्वच्छ सूती रूमाल रखकर उसे पीड़ित भाग में डाल देते हैं और उस पर ऊपर से फूँक मारने की क्रिया करते हैं। इससे रूमाल पर थूक आदि वे पदार्थ रह जाते हैं, जो श्वास के साथ मुँह से निकल गए थे। कपड़े में छनकर निर्मल प्राण तत्त्व रोगी तक पहुँच जाता है।

(२) पीड़ित स्थान से अपने मुँह को एक फुट दूर रखो और दोनों हाथों की कुंडली मुँह के आस-पास इस प्रकार बना लो जैसे किसी को बहुत दूर आवाज देने या दीपक बुझाने के लिए कर लेते हैं। हाथों को इस प्रकार कर लेने से फूँक इधर-उधर न उड़कर सीधी रुग्ण अंग तक पहुँचेगी। इस रीति से रोगी को बहुत शांति एवं शीतलता अनुभव होती है। कभी-कभी तो उसे निद्रा आने लगती है।

रोगी के शरीर से कम-से-कम छह इंच के फासले से नाक द्वारा साँस खींचो और रुग्ण अंग के पास मुँह ले जाकर साँस छोड़ दो। साँस छोड़ते समय मुँह पूरा खोल देना चाहिए जैसे कि जँभाई लेते समय खोलते हैं।

(३) स्पर्श क्रिया

रोगी के शरीर को छूकर जो स्पर्श क्रिया की जाती है, उसका भी विचित्र प्रभाव होता है। इस प्रणाली को मनुष्य जाति चिरकाल से जानती आ रही है। प्रमुख लेखक अल्पिनी ने लिखा है कि मिश्र के पुरोहित लोग एक विशेष प्रकार की रहस्यमय मालिश करके कठिन रोगों को दूर कर देते थे। प्राचीनकाल के ख्यातिनामा चिकित्सक हिपोक्रेट ने मालिश द्वारा ही अनेक रोगी अच्छे किए थे। क्रेशस नामक एक उपचारक इस क्रिया को बहुत महत्त्व देता था। उसने अपनी पुस्तक में तर्क और प्रमाणों सहित मालिश की उपयोगिता सिद्ध की है। ट्रालिस का अलक्षेंद्र नामक एक यूनानी चिकित्सक रहस्यमय मालिश करने में कुशल था और सब बीमारियों में इसका उपयोग करता था। फ्रांस के तेरहवें लुई के राजवैद्य पिटर बोकेल ने राज सभा में ही खड़े-खड़े कुछ भयंकर रोगियों को अच्छा कर दिया था। आजकल भी पैरों को दबाना, सिर की मालिश करवाना, देह में तेल लगवाना, तलवों की मालिश आदि का सब जगह प्रचार है। इन्हें करवाने के बाद लोग महसूस करते हैं, हमें आराम मिल रहा है। पेट के दरद में उदर पर हाथ फिराने और सिरदरद होने पर सिर दबाने का महत्त्व गाँवों के अशिक्षित स्त्री-पुरुष भी जानते हैं।

मालिश द्वारा संजीवन बल प्रेरित करने के लिए जोर-जोर से दबाने की जरूरत नहीं है, बल्कि हाथ हलका, सुखकर और कंपन के साथ चलना चाहिए। औपचारिक मालिशों में हथेली का पिछला भाग और उँगलियों का ही अधिक प्रयोग होना चाहिए।

(१) दोनो हाथों की हथेलियों को आपस में रगड़कर गरम करते हैं और एक या दोनों को पीड़ित स्थान पर रख देते हैं। तीन मिनट बाद फिर उन्हें रगड़ते और उसी प्रकार रखते हैं। इस तरह कई बार करने पर बहुत लाभ होता है। सिरदरद और आँखें दुखने की दशा में यह प्रयोग विशेष उपकारी है।

(२) चारों उँगलियों के छोर एक सीध में करो। चूँकि उँगलियाँ छोटी-बड़ी होती हैं, इसलिए बड़ी को कुछ झुकाकर और छोटी को सीधी रखकर उनके छोर एक सीध में लाए जा सकते हैं। इस प्रकार चारों उँगलियों को एक सीध में लेकर उन्हें रोगी के दुखी अंग का संपूर्ण शरीर पर बहुत हलका स्पर्श करते हुए फिराना चाहिए, यदि उन्हें समस्त शरीर पर यह स्पर्श करना है तो एक साथ ही पूरे शरीर पर मत करो, वरन एकबार सिर से पेट तक और दूसरी बार पेट से पाँवों तक करो। छाती और पेट का विशेष रूप से ध्यान रखो क्योंकि पोषक रस यहीं से पैदा होते हैं।

(३) पूरे हाथ से पीड़ित अंगों को लगातार और क्रम के अनुसार स्पर्श करना एक प्रकार की मालिश है। इससे चुंबक-प्रवाह एक शरीर से दूसरे शरीर में जाकर मदद करता है।

(४) कई चिकित्सकों के मत से 'वर्तल-स्पर्श' नामक एक और भी विधि बहुत उपयुक्त है। इसमें पीड़ित स्थानों पर हाथ और उँगलियों को गोलाकार घुमाते हैं। घड़ी की सुई की तरह हाथ दाहिनी ओर से फेरना चाहिए बाँई ओर से कदापि नहीं।

(५) मांसपेशियों और नाड़ियों के जकड़ जाने की दशा में गूँधने की मालिश बहुत लाभदायक रहती है। आटे को जिस तरह गूँधते हैं, उसी तरह रुग्ण भाग को उँगलियों से क्रमबद्ध गति से दबाते हैं।

(६) चिकोटी काटना उत्तेजक उपाय है। यह रक्त संचार को बढ़ा देता है। तर्जनी और अँगूठे से आध इंच चमड़ी की चिकोटी भरनी चाहिए और फिर उसे छोड़कर दूसरे स्थान को ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार दोनों हाथों से जल्दी-जल्दी पीड़ित भाग को गोलाकार चिकोटियाना चाहिए।

(७) रगड़ने या घिसने की मालिश उन अंगों पर की जाती है, जो बहुत ही निर्बल और क्षीण हो गए हों। चारों उँगलियों का निचला

भाग दुखी अंग पर तब तक रगड़ते हैं, जब तक कि वह खूब गरम न हो जाए।

(८) बार-बार पीटना प्रहार की पद्धति है। हाथ को गँडासे की तरह का बनाओ। कुट्टी कुटने में गड़ासे की धार को जिस प्रकार मारते हैं, उसी तरह हाथ के निचले भाग से लंबी-लंबी थपकी मारो। तलवार या छुरी जिस प्रकार किसी को काटते हैं, उसी तरह हाथ के निचले भाग की क्रिया होती है। उँगलिया मिलाकर हाथ खुला रखा जाता है और कनिष्ठ का (छोटी उँगली) की ओर से प्रहार किया जाता है।

(९) थप्पड़ और चाँटा मारना सब जानते हैं। तुमने किसी में कभी चाँटा जरूर मारा होगा। ठीक उसी तरह यह क्रिया भी होती है, फरक इतना ही है कि यह चाँटे हलके, सुखकर होते हैं और एक नियत गति से एक ही स्थान पर बहुत देर तक लगाए जाते हैं।

(१०) खोखली ताली बजाने का अभ्यास हर कोई थोड़े अभ्यास के बाद आसानी से कर सकता है। नाटक सरकसों में नट लोग मनोरंजन के लिए जिस प्रकार पोले हाथ से चाँटा मारकर खोखली आवाज चटकाते हैं, उसी तरह यह थपकियाँ होती हैं। हथेली के बीच का भाग उठा हुआ और पोला रखते हैं। उँगलियों और हथेली की जड़ का ही प्रयोग होता है। इस प्रकार की थपकियाँ भी बीमार को दी जाती हैं।

(४) कंप उपचार

कंप क्रिया प्राण उपचार का प्रमुख साधन है। इसका प्रभाव आरंभ में कुछ कठिन मालूम होता है, पर कुछ दिन के प्रयत्न से सफलता मिल जाती है। हाथ को कुछ देर तक लगातार इस प्रकार कँपाते रहते हैं मानो विद्युत गति या किसी यंत्र से उसे थरथराया जा रहा हो। यह कंप उपचार है। किसी पतले बेंत को एक बार जोर से फटकार दो तो वह कुछ देर तक कंपकंपाता रहता है।

घड़ियाल में हथौड़ी लगने पर घंटा शब्द होता है और तदुपरांत वह कुछ क्षण काँपती रहती है। यही क्रिया हाथ में होनी चाहिए। कलाई से लेकर कोहनी तक की पेशियों को कड़ी करके थरथराहट पैदा करने से यह कंपन आ सकता है। उपचार करने से पूर्व एक-सी गति से बिना थके हुए हाथ को कुछ देर कँपाते रहने का अभ्यास करना चाहिए।

एक छोटी मेज पर काँच का गिलास रखो और हाथ को मेज पर रखकर उसे थरथराओ। इससे मेज और गिलास में कंपन पैदा होंगे। पानी भी हिलेगा। हाथ का ठीक कंपन वह है, जिसके आघात से पानी के ठीक बीच में कंपन का एक गड्ढा-सा पड़ेगा, इधर-उधर नहीं। कामचलाऊ कंपन भी उसी समय समझा जा सकता है, जब हाथ बिना थके कुछ देर तक एक-सी गति से कँपाता रहे।

जिस अंग पर कंपन देना है, उसे अधिक मत दबाओ। हथेली और उँगलियों का इतना स्पर्श रोगी के शरीर पर होना चाहिए कि हाथ को किसी प्रकार की बाधा या रुकावट न मालूम हो और रोगी को ऐसा अनुभव होता रहे मानो विद्युत-प्रवाह के कंपन मेरे शरीर पर हो रहे हैं। यह हलके कंपन एक स्थान पर देने से भी समस्त शरीर में भिद जाते हैं। जिस समय रोगी के किसी अंग पर कंपन दिया जा रहा है, उसी समय यदि कोई व्यक्ति उसके दूसरे किसी अंग को छुए तो वहाँ भी कंप का अनुभव करेगा।

यह कंपन केवल उँगलियों से एक हाथ की हथेली तथा उँगलियों से और दोनों हाथ की हथेलियों तथा उँगलियों से दिए जाते हैं। यदि थोड़ा भाग पीड़ित है तो एक हाथ का उपचार काफी है। यदि सारे धड़ या मस्तिष्क पर उपचार करना है तो दोनों हाथों का उपयोग करना चाहिए। साधारणतः दो-से-पाँच तक के कंपन पर्याप्त समझे जाते हैं।

मंत्रित वस्तुओं द्वारा उपचार

मनुष्य शरीर का विद्युत प्रवाह उन वस्तुओं पर भी पड़ता है, जिन्हें वह प्रयोग में लाता और स्पर्श करता है। पहना हुआ कपड़ा, झूठा अन्न-जल, छुए हुए कागज-पत्र आदि अपने प्रयोक्ता के 'औरा' से प्रभावित हो जाते हैं। भारतीय तत्त्वदर्शियों ने इसी विज्ञान को ध्यान में रखते हुए छूत-छात का भेद-निर्माण किया है। जो धातुएँ विद्युत-प्रवाह से प्रभावित हो जाती हैं, उनके काँसे, पीतल आदि के पात्रों में अपने से भिन्न प्रकृति के लोगों को भोजन न देने का विधान इसी दृष्टि से किया गया है। सूत की अपेक्षा ऊनी-रेशम आदि के बने वस्त्र दूसरों का असर कम ग्रहण करते हैं, इसीलिए उन्हें पवित्र माना जाता है। पुराने ख्याल के भारतीय ही नहीं, नए ख्याल के अंग्रेज भी छूत का विचार करते हैं। दूषित वस्तु को छूकर वे तुरंत ही साबुन से हाथ धोते हैं। खाज, उपदंश, प्लेग, तपेदिक आदि के मरीजों से सब लोग बचते हैं कि कहीं हमें भी छूत न लग जाए। बुरे लोगों के साथ रहने पर बुरा बनने और अच्छे लोगों के साथ से सुधरने की बात दर्पण की तरह स्पष्ट है और उसे सब लोग मानते हैं।

इन्हीं सिद्धांतों के आधार पर प्राण चिकित्सक कुछ वस्तुओं को मंत्रित करके अपने प्राणबल से भर सकता है। ये वस्तुएँ उस अवस्था में भी काम दे सकती हैं, जब रोगी दूर हो या चिकित्सक के लिए रोगी को बार-बार देखना या अधिक समय तक उपचार करना संभव न हो। जिन चिकित्सकों के पास अधिक संख्या में मरीज आते हैं, वे हर एक के लिए आध-आध घंटा समय नहीं दे सकते। यद्यपि एक से रोगों के कई मरीजों को एक साथ बैठाकर उनका मानसिक उपचार और मार्जन किया जा सकता है। रोगियों की संख्या कुछ अधिक बढ़ जाने पर एक चिकित्सक प्रबंध नहीं कर सकता। यदि अधिक रोगियों का इलाज करने का अवसर आए तो मंत्रित वस्तुएँ देकर चिकित्सा की जा सकती है, किंतु साथ ही

अपने अंदर अधिकाधिक मात्रा में प्राण संचित करना चाहिए, अन्यथा थोड़ी पूँजी को अधिक लोगों में बाँट देने पर हर एक को जरूरत से कम मिलता है, उसी प्रकार का वह इलाज भी होगा।

फलालेन को मंत्रित करना

श्वास द्वारा प्रभावित करने के लिए रोएँदार फलालेन का कपड़ा बहुत अच्छा है। यदि चौबीस घंटे तक ही प्रयोग करना हो तो सूती फलालेन ठीक है, किंतु यदि दो सप्ताह तक प्रभाव कायम रखना हो, तो ऊनी फलालेन लेनी चाहिए। सूती फलालेन साधारण उपचार से प्रभावित हो जाती है, किंतु वह प्रायः एक दिन-रात में अपनी प्रबल शक्ति खो देती है। पीछे तो उसमें एक हलका-सा असर बाकी रह जाता है। ऊनी फलालेन देर में प्रभावित होती है। करीब आधा घंटा उसे शक्तिसंपन्न करने में लग जाता है, किंतु वह असर देर तक ठहरता है और आसानी से दो सप्ताह काम दे जाती है।

रोगी को ठंढा या गरम जिस श्वास की आवश्यकता है, वही इस फलालेन के टुकड़े पर देनी चाहिए। टुकड़ा पीड़ित भाग को देखकर काटना चाहिए। यदि आँख, कान आदि किसी छोटे अंग में पीड़ा है तो उतना ही बड़ा टुकड़ा काफी है, किंतु यदि समस्त शरीर में रोग है तो पेट और छाती को ढक सकने योग्य कपड़ा लेना चाहिए। सारे रोगों की जड़ पेट में होती है। इसलिए सारे शरीर को ढकने की आवश्यकता नहीं, केवल पेट और छाती को प्रभावित करने से ही काम चल सकता है। उपयुक्त टुकड़ा लेकर उसे आध घंटे तेज धूप में सुखा लो। यदि उस समय धूप की व्यवस्था न हो तो आग पर अच्छी तरह सेक लें, जिससे कि अब तक वह जिन विचारों से प्रभावित रहा हो, वे दूर हो जाएँ। यदि तुम प्राण चिकित्सा करते हो तब तो इस प्रकार निर्मल की हुई फलालेन पहले से ही तैयार रखनी चाहिए, जिसमें आवश्यकता पड़ने पर व्यर्थ ही विलंब न हो। इस विशुद्ध टुकड़े को अच्छी तरह धोए हुए

दाहिने हाथ की हथेली पर रखो, हाथ को पसारकर सीधा कर दो, कहीं टेढ़ा या गड्ढेदार न रहे, उँगलियाँ आपस में मिली हुई हों। हाथ पर रखे हुए उस टुकड़े को मुँह से छह इंच के फासले पर रखो और उस साँस को डालना प्रारंभ करो, जिसके अनुसार रोगी की चिकित्सा करना चाहते हो। जवान आदमी के लिए सूती कपड़ा दस मिनट और ऊनी आधा घंटा तक प्रभावित करना चाहिए। स्त्रियों के लिए इस समय का तीन-चौथाई और बच्चों के लिए आधा समय काफी है। इस प्रभावित कपड़े को कागज में लपेट देना चाहिए। प्रयोग करते समय कोई दूसरा व्यक्ति उसे न छुए। उचित समय पर रोगी अपने आप उसे अपने अंगों पर डालने योग्य स्थिति में न हो, तो दूसरा आदमी हाथ से न छूकर लकड़ियों की सहायता से उसे पीड़ित अंग पर डाले और जब उठाना हो, तो लकड़ियों की सहायता से उठाकर कागज में लपेटकर रख दें। इस कपड़े को धूप नहीं लगानी चाहिए।

कागज में शक्ति भरना

एक सफेद, सादा और नया ब्लाटिंग पेपर (स्याही सोख कागज) का टुकड़ा लो। साधारणतः यह पोस्टकार्ड साइज का काफी है। कागज के दोनों ओर शुद्ध जल या गंगाजल के थोड़े छींटे डाल लो। अब अपने दोनों हाथों को रगड़कर गरम कर लो और उनके बीच में उस कागज को दबा लो। एकाग्रतापूर्वक अपने संकल्पबल से निरोगिता के विचार उसमें प्रेरित करो और पाँच मिनट तक इसे अपनी भावनाओं से भरते रहो।

मंत्रित औषधियाँ

कई प्राण चिकित्सा मंत्रित औषधियों का भी विभिन्न रोगों पर उपचार करते हैं। हमारे मत से यह प्रणाली प्राण चिकित्सा की नहीं है, फिर भी जब बहुत-से चिकित्सक जो इसका प्रयोग करते हैं, वह लाभदायक बताते हैं। वे केवल एक ही वनस्पति द्वारा चूर्ण, गोली, टिकिया, अरक आदि बनाते हैं। उनके मत से

दो-तीन वस्तुएँ मिलाकर बनाई हुई, रसादि, विषों द्वारा निर्मित किसी वस्तु का उपयोग करना तो सर्वथा निषिद्ध है। काली मिर्च, सोंठ, तुलसी पत्र, ब्राह्मी, बच आदि किसी वनस्पति औषधियों को अकेली ही लेकर चूर्ण या गोली आदि बनाई जा सकती हैं और निघंटु ग्रंथों में वर्णित उसके गुणों के अनुसार रोगों पर प्रयोग किया जा सकता है। ओषधि तैयार होने के उपरांत उसे श्वासोच्छ्वास क्रिया से मंत्रित करके शीशियों में बंद कर देना चाहिए। केवल शकर या दूध-शकर मिलाकर बनाई हुई गोलियाँ मंत्रित करके सब रोगों में अनुपान भेद से काम लेने के लिए रखी जा सकती हैं।

अन्य उपचार

मंत्रित यज्ञ की भस्म उन रोगियों को मस्तक, छाती, हृदय और कलेजे पर लगानी चाहिए, जो अपने को किसी दूसरे के द्वारा प्रभावित हुआ समझते हैं। किसी को मंत्र चलाकर रोगी किया हुआ समझा जाता हो, नजर लग गई हो या भूत-प्रेत आदि का आक्रमण बताया जाता हो तो यज्ञ की भस्म उसे लगा देनी चाहिए।

कई लोगों का ताबीजों पर विश्वास होता है। केशर, कपूर और चंदन घिसकर अनार की लकड़ी से शुद्ध कागज पर गायत्री मंत्र लिखकर ताबीज में भरा जा सकता है। जिस प्रकार फलालेन या ब्लाटिंग पेपर मंत्रित किए जाते हैं, उसी तरह हाथ के कते और कई बार बटे हुए सूत को मंत्रित करके उसमें ठीक बीचोबीच बराबर-बराबर पाँच-सात गाँठें लगा देनी चाहिए। यह रक्षासूत्र आशीर्वाद के रूप में रोगियों की मानसिक उन्नति कर सकता है। हाथ से मार्जन करने की अपेक्षा कई लोग मोर के पंख या नीम के लहरे से मार्जन करते हैं। उनका कहना है कि इन वस्तुओं को वायु में घुमाने से एक विषनाशक वातावरण पैदा होता है। चिकित्सक इन बातों का स्वयं तजुरबा करें और देखें कि इसमें कहाँ तक सफलता मिलती है।

द्रव पदार्थों को अभिमंत्रित करना

पानी, तेल या मक्खन को भी इसी प्रकार अभिमंत्रित किया जा सकता है। श्वासोच्छ्वास के प्रकरण में पानी और तेल को मंत्रित करने की विधि बताई जा चुकी है। स्वच्छ जल एक काँच के गिलास में लेकर पूर्वोक्त विधि से इच्छाशक्ति एवं श्वास प्रेरित करने पर पाँच-सात मिनट में अभिमंत्रित हो जाता है। तेल के लिए फूँस की पोली नली तेल के पेंदे तक पहुँचाकर उसका दूसरा सिरा मुँह में रखते हुए फूँक मारनी चाहिए, जिससे तेल में बुलबुले उठने लगें। दूध को पानी की तरह मंत्रित किया जाना चाहिए और घी या मक्खन में तर्जनी उँगली पाँच मिनट तक इस प्रकार घुमानी चाहिए, जैसे दही को मथने के लिए रई घुमाई जाती है। यह कहने की तो आवश्यकता ही नहीं कि हर प्रयोग में तीव्र इच्छाशक्ति का समन्वय होना चहिए।

प्राण चिकित्सकों को निजी सलाह

प्राणतत्त्व एक दैवी पदार्थ है। इसलिए इसे प्राप्त करने और सुरक्षित रखने के लिए तुम्हें विशेष रूप से अपने अंदर दैवी गुण धारण करने पड़ेंगे। साधारण वैद्यों की तरह चाहे जैसा जीवन बिताकर तुम सफलता प्राप्त नहीं कर सकते।

तुम चिकित्सक हो इस बात का कभी अभिमान मत करो। अपने को सिद्ध मत समझो, केवल यही अनुभव करो मैं जनता-जनार्दन का एक तुच्छ सेवक हूँ। अपनी छोटी-मोटी शक्ति के अनुसार जितना भी किसी का भला कर सकता हूँ, करता हूँ। किसी को अभिमान में भरी हुई बात मत कहो। 'मैं यह कर दूँगा।' 'मुझ में इतनी शक्ति है।' घमंड के साथ इस प्रकार की शेखी मत मारो, क्योंकि असल में तुम्हारी एक सीमा है और उस सीमा के अंतर्गत रहकर ही तुम दूसरों को अपनी सहायता दे सकते हो। इस बात को गाँठ बाँध लो कि बीमार चंगा करना रोगी की अपनी जीवनीशक्ति के ऊपर निर्भर है। तुम अपने प्राण उसकी मदद के लिए भेज

सकते हो। थके हुए आदमी को विश्राम देकर, मालिश करके, स्नान कराकर, दूध आदि पौष्टिक भोजन कराकर, उत्साहप्रद वाक्य कहकर, जिस प्रकार अपने कार्य पर जुटने और सफलता प्राप्त करने के लिए लगाया जाता है, वही काम अपनी चिकित्सा द्वारा तुम करते हो। यदि कोई आदमी बिलकुल ही हतवीर्य हो गया हो और मरणासन्न दशा में हो तो रबड़ी और मालपुए भी उसे विशेष लाभ न पहुँचा सकेंगे। जिसकी अपनी जीवनीशक्ति मर रही है, वह बाहर की थोड़ी-बहुत सहायता से जी भी नहीं सकता। निर्बल प्राण वालों को ठीक करने में कुछ देर लगती है और सतेज रक्त वाले रोगी बहुत शीघ्र अच्छे हो जाते हैं। एक बीमार मामूली दवा से थोड़े ही समय में अच्छा हो जाता है, पर दूसरा मामूली रोग के लिए महीनों बढ़िया-से-बढ़िया दवाएँ खाने पर भी कुछ लाभ प्राप्त नहीं करता। इसमें दवा का दोष नहीं है। लोगों की समझ भ्रमपूर्ण है, यदि वह ऐसी दशा में ठीक इलाज को कोसें। निश्चय ही कोई इलाज किसी बीमारी को अपनी शक्ति से अच्छा नहीं कर सकता। वह इतना ही करता है कि रोगी की जीवनीशक्ति की मदद करे। प्राण चिकित्सा भी एक इलाज है। वह निरापद और सर्वश्रेष्ठ उपचार है, इसके द्वारा दूसरे इलाजों की अपेक्षा रोगी बहुत जल्द अच्छे होते हैं। यह शरीर शास्त्र और मानव शास्त्र के गूढ़ सिद्धांतों के आधार पर बना हुआ एक वैज्ञानिक उपचार ही है। कोई जादू-टोना या देवताओं के बल से होने वाला चमत्कार नहीं है। जो इसे चमत्कार मानते हैं, वह भूल करते हैं, इसलिए सदैव निरभिमान रहो। सबके प्रति नम्रता का व्यवहार करो। अपनी पद्धति के सिद्धांत लोगों के सामने रखो और उन्हें स्वतंत्रतापूर्वक विचार करने दो। यदि वे इस प्रणाली पर विश्वास लाएँ तो उपचार करो। नया कार्य देखकर उपेक्षा करें तो चिढ़ो मत और न बुराई मानो। जो लोग दूसरी पद्धतियों से इलाज करते हैं, उनसे द्वेष न करो और न उन्हें गलत काम करने वाला समझो। थके हुए आदमी को एक व्यक्ति पैर दावकर ठीक करना

चाहता है, दूसरा दूध पिलाकर। प्रकृति के संपूर्ण रहस्यों को अभी कोई नहीं जानता। जिसे जितना ज्ञान है, उतना अपनी बुद्धि के अनुसार करता है। किसी भी पद्धति से सही तरीके से इलाज करने पर लाभ होता है। परिमाण में कमी-वेशी की बात दूसरी है।

अपने विचार पवित्र रखो। तुम चिकित्सक बनने जा रहे हो इसलिए तुम्हारा दर्जा पिता के समान है। रोगियों को अपने पुत्र की जैसी ममता और सहानुभूति की दृष्टि से देखो। कई दुष्ट वैद्य अपने पास आने वाली स्त्रियों को कुदृष्टि से देखते हैं और बीमारों से अधिक-से-अधिक धन खींचने की सोचते रहते हैं। तुम भी यदि इन घातों को अपनाओगे, तो हम इन पंक्तियों को मध्यस्थ बनाकर अपने हृदय की वाणी में तुम्हारे अंतःस्थल से कहते हैं कि प्रियवर! घाटे में रहोगे और तुम्हें बहुत पछताना पड़ेगा। सबके मन एक ही महामन के अंश हैं। दिल से दिल को राहत होती है। आंतस्कि भावों का गुप्त रूप से तुरंत ही दूसरे पर प्रभाव पड़ता है। बुरे विचार रोगी के मन पर एक प्रकार का आघात करते हैं, जिससे उसे कष्ट होता है और उसके इलाज से वह लाभ नहीं लेता। तुम सदैव रोगियों पर प्रेम और वात्सल्य की किरणें छोड़ते रहो। सहानुभूति और हित कामना की वर्षा करके उसे बहलाते रहो। अपने को निस्वार्थ, निष्कपट और दूध की तरह स्वच्छ रखो। जब तुम्हारी मानसिक भावनाएँ ऐसी बन जाएँगी, तो देखोगे कि चारों ओर का वातावरण कितना शीतल हो गया है। छटपटाता हुआ रोगी तुम्हारे निकट आते ही एक शांति और सुख का अनुभव करता है, देखते ही उसकी तबीअत हरी हो जाती है और थोड़ी देर के व्यवहार करने पर उसे लगेगा कि मेरा रोग आधा हो गया।

केवल इस पुस्तक को पढ़कर ही तुम पूरे चिकित्सक नहीं बन जाते। श्वासोपचार, मार्जन, कंप आदि क्रियाओं को सीखकर ही तुम्हारा कर्त्तव्य समाप्त नहीं हो जाता, वरन आरंभ होता है। कुछ खास तरह के हाथ हिला देने, फूँक मार देने आदि से ही

बीमारी अच्छी नहीं हो जातीं। इसके लिए वह वस्तु उपार्जन करनी पड़ती है, जिसके द्वारा दूसरों को सहायता मिलती है। यह प्राणशक्ति का उपार्जन है। इसके लिए एक स्वतंत्र अध्याय दूसरी जगह दिया हुआ है। प्रतिदिन या जैसे सुविधा हो उन क्रियाओं को करने से भरपूर प्राणशक्ति उत्पन्न होती है। यदि तुम अपने लिए अधिक मात्रा में प्राण उपार्जन न करोगे तो रोगियों को अपना रस चूसने दोगे। पानी में डूबता हुआ व्यक्ति पास वाले को पकड़कर उस पर अपना भार डालता है, ताकि वह जल्द से जल्द पूरी ताकत के साथ उसे उभार ले। यही बात रोगों की है। रोगी की शारीरिक विद्युत बहुत ऋण (Negative) हो जाती है। वह चिकित्सक का प्राण पीकर पुष्ट होना चाहता है। यदि तुम स्वतंत्रतापूर्वक उसे पीने दो और नई कमाई न करोगे तो याद रखो दिवालिया बन जाओगे और अपने को स्वयं बीमार की दशा में पाओगे। जल्दी और तेजी से किसी का स्वभाव सँभालने योग्य जितना अधिक प्राण तुम्हारे पास होगा, रोगी को उतनी ही सफलता के साथ चंगा कर सकोगे।

अपना मार्ग खुद निकालो। इस पुस्तक में बहुत-सी क्रियाएँ और अनुभूतियाँ लिखी गई हैं, पर वह सबके लिए एक-सी नहीं हो सकतीं। एक-से नियम जड़ पदार्थों के लिए बन सकते हैं। सब जीवित प्राणी आपस में एक समान नहीं होते। उनमें बहुत भिन्नता होती है। किसी को बैंगन फायदा करता है तो किसी को नुकसान। कोई पदार्थ एक को सुखकर है तो दूसरे को दुःखकर। मनुष्यों की रुचि भिन्नता इसका प्रमाण है। वैद्य लोग कहते हैं कि "अपने-अपने कोठे की बात है किसी को कोई चीज माफिक पड़ती है किसी को कोई।" सबके शरीरों में प्राणशक्ति भी अलग-अलग मात्रा में होती है और उनके गुणों में भी बहुत फरक पाया जाता है। प्राण चिकित्सक एक क्षण के अंदर रोगी में जितना जीवन भर देता है दूसरा उतना बहुत देर में

कर पाता है। किसी के मार्जन प्रभावशाली होते हैं, तो किसी के श्वास। इसलिए अपनी शक्ति, योग्यता और उपचार क्रिया के बारे में स्वयं अनुभव करो। एक सच्चे खोजी की तरह हर एक रोगी के उपचार को सूक्ष्म दृष्टि से देखो और उसके द्वारा जो कुछ अनुभव हो उसके आधार पर अपनी परिपाटी निश्चित कर लो। दूसरों के अनुभव से तुम लाभ उठा सकते हो, पर यह जरूरी नहीं कि किसी परंपरा का अंधानुकरण किया जाए। हर चिकित्सक को अपने लिए अलग-अलग उपचार विधान तैयार करने की प्राणशास्त्र इजाजत देता है, वशर्त वह मूल सिद्धांतों के विपरीत न हो।

अपना इलाज

कोई पूछे तुम्हारे शरीर में क्या वस्तुएँ हैं तो यह उत्तर दोगे कि हड्डी, मांस, चमड़ा, रक्त आदि। यह ठीक भी है, परंतु सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर और ही कुछ मालूम पड़ेगा। अपने खून की एक बूँद को सूक्ष्मदर्शक यंत्र के आगे रखकर देखो। उसमें असंख्य सजीव परमाणु चलते-फिरते दिखाई देंगे। इनके अंदर एक चैतन्य शक्ति है। यह छोटे परमाणु देखने में अलग-अलग शकल के मालूम पड़ते हैं तो भी इनके अंदर एक ही प्रकार का जीवन तत्त्व है। इस एकता के कारण ही शरीरधारी जीव का निर्माण हुआ है। इसी प्रकार अनेक प्रकार के जीव-जंतु तथा वनस्पति आदि में एक जीवन तत्त्व रहता है और सब जगहों पर उसकी एकता के कारण संसार में क्रियाशीलता है। यदि वह महाशक्ति न होती तो कोई भी जीव हरकत न करता। सब ज्यों-के-त्यों पड़े रहते। इस महान जीवन-तत्त्व का नाम 'प्राण' है। कोई-कोई इसे 'मानवी विद्युत' 'आकर्षण शक्ति', 'क्रिया शक्ति' आदि नाम भी देते हैं।

यह प्राणशक्ति जीवन को आगे बढ़ाती है और उसकी त्रुटियों को पूरा करती है। घाव होने पर उस स्थान की त्वचा नष्ट

हो जाती है, परंतु वह शक्ति इस अभाव को दूर कर देती है। पिछले अध्यायों में प्राणबल से दूसरों के रोग दूर करना बताया गया है। उसके द्वारा अपनी दुर्बलता और बीमारी भी मिटाई जा सकती है।

निर्बलता आधी बीमारी समझी जाती है। कमजोरी के इतने उपद्रव होते हैं कि वे छोटे-छोटे स्वतंत्र रोगों के रूप में दिखाई देने लगते हैं। भूख कम लगना, भोजन ठीक तरह न पचना, अरुचि, भारीपन, आलस्य, पैरों का भड़कना, सिर, कमर का दुखना, थोड़ा काम करने पर बहुत थकान आना, गला सूखना, आँखें तिलमिलाना आदि अनेक विकार कमजोरी के साथ आते हैं और उसी के साथ चले जाते हैं। इसके लिए कुछ उपाय नीचे बताए जाते हैं, जिनके द्वारा तुम पर्याप्त मात्रा में अपने अंदर प्राण संचित करके बलवान बन सकते हो।

(१) जब तुम पानी पियो तो एकदम गटागट मत पी जाओ, उसे इस प्रकार पियो जैसे दूध या चाय को एक-एक घूँट करके पीते हैं। पीते समय मन में भावना करो कि पानी का जीवनतत्त्व मेरे संपूर्ण शरीर में भरा जा रहा है। मैं इसमें से प्राण प्राप्त करके अपने अंदर धारण करता हूँ। हर घूँट के साथ मन-ही-मन ओ३म् का उच्चारण करो। भोजन करते सयम भी ऐसी भावना करो। हर ग्रास को खूब चबाओ और उसे निगलते समय मन-ही-मन ओ३म् का उच्चारण करो।

(२) दर्पण के सामने खड़े हो और अपने चेहरे को उसमें देखो प्रत्येक अंग पर गहरी दृष्टि डालो। भावना करो कि तुम्हारे गालों पर तेज झलक रहा है। आँखों में ज्योति है। होठों पर मुस्कान है। नाक शुद्ध वायु ग्रहण करती है। कान ठीक तरह सुनते हैं। मुँह खोलो और उसके अंदर का भाग दर्पण में देखो। जीभ के ऊपर भावना करो कि वह लाभदायक पदार्थों की इच्छा करती है और मधुर वचन बोलती है। इसी प्रकार कंठ, तालू, दाँत, जबड़े, मसूड़े,

रसवाहिनी गिल्टियों के बारे में मानसिक भावना करो कि यह सब सतेज और जाग्रत हैं। अपनी-अपनी ड्यूटी को ठीक तरह पूरा करते हैं तथा आगे करेंगे।

(३) किसी एकांत स्थान में जाओ जहाँ न अधिक सरदी हो और न अधिक गरमी। लज्जानिवारक वस्त्रों के अलावा सब कपड़े उतार दो और अपने हाथ, पाँव, छाती, पेट, कमर, पेडू आदि को स्वस्थता और सबलता की भावना से देखो और उस पर विश्वास करो। शरीर पर तेल लगाना हो तो अनुभव करते जाओ कि तेल की प्राणशक्ति शरीर में प्रविष्ट होकर इसे सतेज बना रही है।

(४) किसी निर्जन स्थान में जाकर आरामकुरसी या पलंग पर चित लेट जाओ या जमीन पर चटाई बिछाकर सीधे पड़े रहो। पैरों को कुछ ऊँचा रखने के लिए उनके नीचे एक तकिया लगा लो। देह को रूई की तरह ढीली छोड़ दो। इतनी ढीली मानो निर्जीव हो गई हो। अब भावना करो कि संसार महान नीला आकाश है और उसमें अत्यंत प्राणशक्ति भरी हुई है। इस समय और किसी वस्तु का ध्यान न आना चाहिए। यह अभ्यास कुछ दिन लगातार करने पर पूरा होता है, पर जब मन इतना शांत हो जाए कि विश्वव्यापी प्राण के अतिरिक्त किसी पेड़, पहाड़, महल, मंदिर, जीव-जंतु आदि का ध्यान न आए तो अद्भुत लाभ होता है। दस-पंद्रह मिनट इस प्रकार पड़े रहने पर सारी थकावट चली जाती है और शरीरबल से भर जाता है। मनोरंजन की व्यवस्था करो कि एक-दो बार खूब जी खोलकर हँस लो।

इन क्रियाओं को नियमित रूप से कुछ दिन करने पर अद्भुत लाभ होता है। अच्छे-अच्छे बहुमूल्य पदार्थों का सेवन जो लाभ नहीं पहुँचा सकता, वह इनके द्वारा प्राप्त होता है। अपनी भावनाओं में जितनी दृढ़ता और अधिक विश्वास होगा उतनी ही मात्रा में जल्दी और अधिक लाभ प्राप्त होता है।

किसी खास रोग का उपचार

किसी खास स्थान पर पीड़ा हो तो उपर्युक्त उपायों के साथ कुछ अन्य उपचार भी करने चाहिए।

(१) शरीर को शिथिल करके पड़े रहो और जिस अंग में पीड़ा है, केवल उसी अंग का ध्यान करो। जैसे यदि पेट में दरद हो रहा हो तो ऐसी भावना करो कि तुम्हारे शरीर में केवल पेट ही एक मात्र अंग है। अपना सारा ध्यान पेट के ऊपर ही लगा दो। उसी की कल्पना करो। ऐसा करने से शरीर की समस्त शक्तियाँ उस स्थान पर केंद्रित हो जाएँगी और जिस प्रकार से आतिशी शीशे में सूर्य की किरणें इकट्ठी हो जाती हैं, उसी प्रकार समस्त शक्तियाँ वहाँ इकट्ठी होकर उस अंग में इतना बल भर देंगी कि वह रोगमुक्त हो सके।

(२) पीड़ित स्थान पर हाथ फिराओ और अनुभव करो कि अब यह अपनी निर्बलता त्याग कर सचेत हो रहा है और ठीक प्रकार कार्य करने की सामर्थ्य प्राप्त करता जा रहा है।

(३) नाक द्वारा श्वास खींचो और अनुभव करो कि यह वायु पीड़ित स्थान पर पहुँचकर वहाँ नवीन प्राण भर रही है। साँस मुँह से धीरे-धीरे छोड़ो और कल्पना करते जाओ कि उस अंग के विकार इस वायु के साथ मिलकर बाहर निकल रहे हैं।,

(४) अपनी पीड़ा को बढ़ी-चढ़ी मत मानो। सदैव उसे तुच्छ और थोड़ी देर ठहरने वाली समझो। साहस मत खोओ। यही समझते रहो कि यह साधारण-सा रोग थोड़े ही समय में अच्छा हो जाएगा। रोग की ही हर समय कल्पना मत करते रहो। दूसरे कामों में अपना चित्त बँटाओ और हर घड़ी अपने को पहले से अच्छा अनुभव करो।

इन विधियों से कष्टसाध्य और भयंकर व्याधियाँ बहुत जल्द अच्छी हो जाती हैं। कुछ देर होती दीखे तो भी अश्रद्धा मत करो, क्योंकि देरी का कारण अपनी क्रियाशीलता है। प्राणतत्त्व का यह

अटल नियम है कि जितनी दृढ़ता के साथ उसे आकर्षित किया जाएगा, उसी प्रकार लाभ पहुँचेगा।

मानसिक चिकित्सा

रोगों का एक और भी कारण है। वह है—बुरे विचार। नीच और हीन विचार करने से मनुष्य का स्वास्थ्य गिरने लगता है और वह शरीर के अंदर असाधारण परिवर्तन करता हुआ एक दिन रोग के रूप में प्रकट होता है। आदमी को सदैव हँसमुख रहना चाहिए। उसके चेहरे पर मुसकराहट नाचती रहे तो गिरा हुआ स्वास्थ्य भी सुधर सकता है, किंतु इस प्रकार की प्रसन्नता, परोपकार, प्रेम, सहानुभूति, उदारता और सचाई आदि गुणों के कारण प्राप्त होती है। हर घड़ी स्वार्थ, भय, चिंता, अनुदारता और लोभ के विचार जिसके मस्तिष्क में भरे रहेंगे, वह जरूर बीमार होगा और समय से पूर्व कुत्तों की मौत मर जाएगा।

प्राण चिकित्सक सबसे अधिक ध्यान रोगी के मस्तिष्क और उसकी भावनाओं पर देता है, क्योंकि समस्त शरीर पर मन का शासन है। उसके ऊपर कोई प्रभाव पड़ने से समस्त शरीर प्रभावित होता है शरीर के समस्त ज्ञानतंतु मस्तिष्क से संबंधित हैं और वहीं से प्रेरणा प्राप्त होती है। मन में जो क्रियाएँ होती हैं, उनका असर रस उत्पन्न करने वाली विभिन्न स्थानों की ग्रंथियों, पाचन अवयवों और शरीर के अन्य अंगों पर तुरंत प्रभाव पड़ता है। देह के हर भागों के बाल-में-बाल से भी पतले ज्ञानतंतु फैले हुए हैं और इन ज्ञानतंतुओं को मस्तिष्क की अधीनता में रहकर सारा काम करना पड़ता है। मस्तिष्क में अच्छे विचार होने पर स्वास्थ्य सुधरता है और निराशा और भय के भाव होने पर दिन-दिन गिरता जाता है। इसलिए रोगी में प्राणशक्ति भरने के साथ-साथ उसका मानसिक उपचार भी करना चाहिए।

बुरे विचार अपने साथ चिंता, भय, क्रोध, कलह आदि लाते हैं और ये ऐसी अग्नियाँ हैं जो थोड़े ही दिनों में सार भाग जलाकर

आदमी को खोखला कर देती हैं। इस संबंध में कुछ प्रसिद्ध शरीर-शास्त्रियों की सम्मतियाँ नीचे दी जाती हैं।

डॉ० आल्टन लिखते हैं—"भय, ईर्ष्या, घृणा, निराशा, अविश्वास और मानसिक विकार शरीर की स्वाभाविक क्रियाओं को मंद करके खून को सुखा देते हैं।" डॉ० वेन लिखते हैं—"संताप और मनोव्यथा के कारण कई लोगों की मृत्यु हो गई और अनेक का मस्तिष्क खराब हो गया। इस प्रकार का परिणाम स्वाभाविक ही है।" डारबिन साहब कहते हैं—"चिरकालीन चिंता से रक्त की गति धीमी हो जाती है और चेहरे पर पीलापन, मांसपेशियों में शुष्कता आ जाती है। पलकें झूल पड़ती हैं, छाती बैठ जाती है, गरदन झुक जाती है एवं होंठ, सिर, जबड़ा आदि गिर जाते हैं। हँसते आदमी पर घोर उदासी छा जाती है।" मनोविज्ञानशास्त्री अल्फम मेरियम कहते हैं—"क्षोभ के कारण कई व्यक्ति अचानक मर गए। मानसिक क्षुब्धता शरीर पर ऐसे अनिष्टकर परिणाम उपस्थित करती है, जिससे वह मुरदा कहा जा सके।" सर रिचार्डसन का अनुभव है—"मानसिक कष्ट से होने वाला प्रमेह ठीक शारीरिक कारणों से होने वाले प्रमेह के समान होता है।" सर जार्ज पैगोट बताते हैं—"असंख्य रोगियों को देखने के बाद मुझे यह पक्का विश्वास हो गया है कि फोड़े होने का कारण चिरकालीन चिंता होती है।" डॉ० मुर्चीसन का एक कथन है—"कई रोगियों की जाँच करने पर यह स्पष्ट हो गया है कि जिगर के फोड़े का कारण पुरानी चिंता या मानसिक दुःख होता है।" डॉ० मैडरले बताते हैं—"निश्चय ही मानसिक क्षोभ के कारण शरीर की वृद्धि में रुकावट आती है और धमनियाँ अपना काम ठीक प्रकार से करने से इनकार कर देती हैं।" डॉ० एमर गेटस का दावा है—"क्रोध, निराशा और क्षोभ शरीर में भयंकर विष उत्पन्न करते हैं, जिससे भारी हानि होती है।" डॉ० मसोका का अनुभव है—"कंप, अपस्मार, मसूड़ों के रोग और धनुर्वात भय से ही उत्पन्न होते हैं।" डॉ० तुकेने का कथन है—

"पागलपन, लकवा, हैजा, यकृत रोग, बालों का जल्दी सफेद होना, गंजापन, रक्त की कमी, गर्भपात, मूत्ररोग, चर्मरोग, फोड़े, पसीने की अधिकता, दाँत जल्दी गिरना आदि रोगों की जड़ में भय या संताप छिपा होता है। हैजा या प्लेग से मरने वालों में बीमारी से मरने की अपेक्षा भय से मरने वालों की संख्या अधिक होती है।"

इन महत्त्वपूर्ण सम्मतियों पर ध्यान देने से यह स्पष्ट हो जाता है कि मन में बुरे विचार लाने से शरीर का बड़ा अनिष्ट होता है। स्वस्थ रहने की इच्छा रखने वाले को चाहिए कि सदैव प्रसन्न रहें और बुरे विचारों को अपने पास न फटकने दें।

जिन रोगियों को बुरे विचार घेरे हुए हों, उन्हें धर्मोपदेश एवं सत्य मार्ग के संबंध में शिक्षा देनी चाहिए, यदि वह तात्कालिक कोई उदारता एवं त्याग का कार्य कर सकता हो तो वैसा कराना चाहिए। व्रत, अनुष्ठान, जप, गोदान, अन्नदान आदि कार्य बीमारी दूर करने के लिए कराने का हिंदू धर्मशास्त्रों में विधान है और उसका पालन निष्ठापूर्वक होता है। इन कार्यों में रहस्य यह है कि रोगी में त्याग और उदारता की भावनाएँ पनप जाएँ और वे कठिन कष्ट को दूर कर दें। जिन रोगियों को आर्थिक सुविधा न हो, उन्हें राम नाम, गायत्री या अन्य मंत्र जपने की सलाह देनी चाहिए और इससे रोग मुक्त हो जाने का उसे तर्क एवं उदाहरण सहित विश्वास करा देना चाहिए।

विचारों का स्वास्थ्य पर अद्भुत प्रभाव पड़ता है। कई बार तो नीरोग लोग भ्रमपूर्ण कल्पना कर लेते हैं, उसके अनुसार बीमार पड़ जाते हैं और मर तक जाते हैं और कई बार मरणासन्न रोगी अपनी इच्छाशक्ति के बल पर उठ बैठते हैं और नई जिंदगी प्राप्त कर लेते हैं।

एकबार एक स्कूल के खिलाड़ी लड़के छुट्टी पाने में सफल प्रयत्न हुए। कुछ लड़के चाहते थे कि उन्हें पढ़ने से छुट्टी मिल जाए। उन्होंने एक तरकीब सोच ली। जब मास्टर साहब आए तो

एक लड़के ने जाकर पूछा—"आपका चेहरा उदास क्यों है?" अध्यापक को उदासी का कुछ पता न था। उन्होंने एकबार अपनी ओर देखा और गंभीरतापूर्वक कहा—"भाई, मुझे तो ऐसी कोई बात मालूम नहीं पड़ती।" थोड़ी देर बाद दूसरा लड़का आया और उसने कुछ चिंतित-सा मुँह बनाकर कहा—"आपको आज ज्वर आ गया-सा मालूम पड़ता है।" अब मास्टर साहब का संदेह बढ़ा और उन्होंने अपनी नब्ज टटोलना शुरू किया। संदेह के कारण भ्रम बढ़ा और सोचने लगे, यह लड़के झूठ थोड़े-ही बोलते होंगे। शायद मैं अपने मर्ज को ठीक प्रकार पहचान नहीं पा रहा हूँ। इतने ही में तीसरा लड़का आ पहुँचा, उसने आग्रहपूर्वक कहा—"बुखार की हालत में आपको आराम करना चाहिए।" पहले निश्चय के अनुसार और लड़के भी आ पहुँचे और उन सबने मास्टर साहब को ज्वर आ जाने की बात का समर्थन किया। अब तो अध्यापक का भ्रम इतना बढ़ा कि उन्हें सचमुच बुखार आ गया और मदरसे की छुट्टी करके घर को चले गए।

अमेरिका के एक होटल में एक पुराना और बहुत-ही दुर्बलकाय मरीज ठहरा हुआ था। वह अच्छी तरह चल-फिर भी नहीं सकता था। अचानक उस होटल में आग लग गई। मरीज इस विपत्ति को देखकर घबराया और अपने प्राण तथा सामान बचाने के लिए आवेश में आ गया। वह कई मंजिल ऊँचे मकान से कुछ सामान लेकर उतरा और अवसर पाकर अधिक सामान बचा लेने के लिए सात बार ऊपर चढ़ा और उतरा। उसी दिन से उसका पुराना रोग भी चला गया। इसी प्रकार लकवे से पीड़ित एक स्त्री का रोग दूर हुआ। उस नगर में जब जोरदार भूकंप आया तो सब लोग अपने प्राण बचाने के लिए भागे। इस अपाहिज स्त्री की किसी ने खबर भी न ली, किंतु वह स्त्री भी चली और घसिटते-घसिटते कई मील का रास्ता पार करके सुरक्षित स्थान पर पहुँची और साथ ही रोग से भी मुक्त हो गई।

डॉ० स्काफिल्ड ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि मेरे इलाज में एक विषमज्वर की रोगिणी आई। उसे संदेह होने लगा था कि कदाचित् यह रोग मेरा प्राणघातक होगा। उसने एक दिन मुझसे कहा—"क्या मैं इस रोग से मर जाऊँगी?" मैंने कहा—"जरूर, निश्चय ही।" अब उसने मेरी ओर बड़ी कातर दृष्टि से देखा और कहा—"क्या आप मुझे बचाने के लिए कुछ भी नहीं कर सकते?" मैंने उत्तर दिया—"जब तुम सोचती हो कि मैं मर जाऊँगी, तो फिर तुम जरूर ही मर जाओगी। ऐसी दशा में तुम्हारे लिए कुछ प्रयत्न करना भी बेकार है।" वह घबराई और पूछने लगी—"क्या मेरे विचारों पर ही मेरा जीना निर्भर है?" मैंने कहा—"तुम यदि मजबूती के साथ विश्वास कर लो कि मैं अच्छी हो जाऊँगी तो निश्चय ही तुम्हें बचाया जा सकता है।" उसने वैसा ही विश्वास करने का वायदा किया और बहुत जल्द अच्छी हो गई।

एकबार यूरोप के एक नगर में किसी अपराधी को मृत्यु की सजा दी गई। डॉक्टरों ने उस अपराधी को अपनी क्रिया द्वारा मार डालने की अदालत से स्वीकृति ले ली। अपराधी को एक मेज पर लिटाकर उसकी आँखों से पट्टी बाँध दी गई और गले के पास एक छोटी पिन चुभो दी गई, जिससे एक-दो बूँद खून निकल आया। उसी जगह पर ऊपर से एक पतली नली द्वारा पानी बहाया गया, जो उसकी गरदन पर होता हुआ मेज से नीचे टप-टप गिरने लगा। अपराधी को विश्वास हो गया कि उसकी नस काट दी गई है, जिसमें होकर खून बह रहा है। थोड़ी देर में उसके सारे शरीर का खून बह जाएगा और उसकी मृत्यु हो जाएगी। उसने इन बातों पर विश्वास कर लिया और केवल दस-पाँच बूँद खून निकलने पर ही भय के कारण कुछ ही देर में मर गया।

स्विट्जरलैंड के बड़े अस्पताल की रिपोर्ट में ऐसे कई विचित्र उदाहरण हैं। साँप के काटने पर एक मरीज अस्पताल में दाखिल हुआ और बहुत कोशिश करने के बाद भी मर गया। डॉक्टरों ने

लाश की परीक्षा की, किंतु उसमें एक रत्तीभर भी विष न था। जिस स्थान को सर्प द्वारा काटा हुआ समझा गया था, वह मामूली खुरसट साबित हुई। इसी प्रकार एक मरीज ऐसा मरा जो यह कहता था कि गलती से दवा के बदले जहर पी गया है। उसके मरने पर सब तरह की तहकीकात कर ली गई कि उसने दवा को ही पिया था, गलती से जहर का लेबल लग गया था। एक व्यक्ति अस्पताल में ऐसा दाखिल हुआ, जो यह कहता था कि मैं अपने मुँह में लगे हुए चार नकली दाँतों को निगल गया हूँ और उनकी पीड़ा से छटपटा रहा हूँ। डॉक्टर हैरान थे कि इसके पेट में तो कुछ भी नहीं है। इतने में ही उसकी स्त्री आई और उन चारों दाँतों को दिखाती हुई बताने लगी कि यह तो तुम्हारे कोट की जेब में रखे हुए थे। रोगी अपनी गलती पर शरमाया और चुपचाप अस्पताल से उठ गया। प्लेग, हैजा, एन्फ्लुऐंजा आदि बीमारियों में जितने आदमी मरते हैं, उससे बहुत अधिक डर के मारे मर जाते हैं।

इन सब बातों पर विचार करने से यह आवश्यक प्रतीत होता है कि प्राण चिकित्सा के साथ-साथ रोगी का मानसिक इलाज भी किया जाए। मानसिक परिवर्तन की शक्तिशाली क्षमता प्राप्त करने के लिए और दूसरों को दृढ़तापूर्वक अपना इच्छानुवर्ती बना लेने का एक अलग विज्ञान है, जिसकी पूर्ण जानकारी हमारी ही पुस्तक 'परकाया प्रवेश' में है। यदि वे विधियाँ न मालूम हों तो भी इस विषय में कुछ संक्षिप्त जानकारी प्राप्त कर लेना चिकित्सकों के लिए आवश्यक है।

तुम्हें यह जानना चाहिए कि मन के दो भाग हैं। एक प्रकट मन (Objective Mind या Conscious Mind) और दूसरा गुप्त मन (Subjective Mind या Unconscious Mind या Subliminal self) होता है। साधारण सोचने-विचारने, तर्क करने आदि का काम प्रकट मन या स्थूल दिमाग से होता है, किंतु जीवन के अधिकांश गुप्त और महत्त्वपूर्ण काम गुप्त मन द्वारा होते हैं। जो

बातें हमारी पुरानी स्मृति में पड़ जाती हैं, वह गुप्त मन में जमा होती हैं। आदतों के बीज गुप्त मन में जमते हैं। बाहरी मन किसी व्यसन को बुरा समझता है और उसे छोड़ना चाहता है, पर भीतर-ही-भीतर उस काम को करने की प्रेरणा करता है, यह कार्य गुप्त मन का है। एक आदमी के मरने पर तुम्हें कुछ भी दुःख नहीं होता, किंतु यदि कोई सगा-संबंधी मर जाए तो दुःख में विकल हो जाते हो। बहुत से आदमियों को देखते ही कोई विशेष बात नहीं होती, किंतु किसी खास आदमी की ओर ऐसे आकर्षित हो जाते हो, जो उससे मिले बिना और देखे बिना चैन नहीं पड़ता। प्रकट मन पर घटनाओं का कोई खास असर नहीं पड़ता किंतु यदि वह बात इतनी तीव्र हो कि गुप्त मन तक उतर जाए, तो उसका असाधारण असर पड़ता है। यह गुप्त मन अधिक तर्क-वितर्क करना नहीं जानता, किंतु उसमें जो बात एकबार भर दी जाए, से बहुत समय तक ग्रहण किए रहता है। चूँकि हृदय की धड़कन, रक्त-संचार, श्वांसोच्छ्वास, पाचन क्रिया, निद्रा, जाग्रति आदि शरीर की समस्त अनैच्छिक क्रियाएँ उसी मन द्वारा की जाती है। इसलिए जिन धारणाओं को गुप्त मन ग्रहण कर लेता है, उनका निश्चयपूर्वक शरीर पर असर पड़ता है।

एकबार एक शिकारी पर एक शेर ने आक्रमण किया। उसके साथियों ने शेर को बंदूक से मार दिया। शिकार को खरोंच ही लगी थी, पर उसने अपने को बुरी तरह आहत हुआ समझा और डर के मारे मर गया। कई बार नए डॉक्टर उन रोगों के शिकार हो जाते हैं, जिनको कष्टसाध्य रोगों से पीड़ितों का इलाज करना पड़ता है। लकवा के मरीज का इलाज करते-करते एक डॉक्टर स्वयं लकवा का पीड़ित हो गया। कई अपराधी फाँसी के तख्ते पर चढ़ने से पहले ही दम तोड़ देते हैं। होता यह है कि किसी कारण गुप्त मन किसी बात को स्वीकार कर ले, तो तुरंत ही शरीर उसका अनुवर्ती बन जाता है।

इसी गुप्त मन पर प्रभाव डालकर तुम रोगी को अच्छा कर सकते हो। प्रकट के नीचे गुप्त मन है। साधारणत: प्रकट मन में होती हुई सूचनाओं को बिना तर्क-वितर्क के और कुछ उछले-कूदे बिना बाहरी मन किसी की बात को नहीं मानता और मान भी ले तो इतनी श्रद्धा और विश्वास के साथ ग्रहण नहीं करता कि उसका असर गुप्त मन तक ज्यों-का-त्यों रास्ते में बिना छने पहुँच जाए। धीरे-धीरे बहुत समय तक प्रयत्न करने पर तो यह भी हो सकता है, पर बीमारी की दशा में इतना अवकाश नहीं होता। उस समय तो ऐसे उपचार की आवश्यकता होती है, जो जल्द-से-जल्द कोई आश्चर्यजनक परिणाम दिखा सके। ऐसी दशा में इस बात की जरूरत होती है कि प्रकट मन को एक तरफ लटकता छोड़ दिया जाए और सीधा गुप्त मन से संबंध स्थापित कर लिया जाए। मैस्मेरिज्म की क्रिया द्वारा यही होता है। बेधक विद्युत द्वारा प्रकट मन को निद्रित कर देते हैं और गुप्त मन से सीधा संबंध स्थापित कर अद्‌भुत तमाशे कराते हैं। प्रकट मन को निद्रित करने या दूसरे तरीकों से सीधे गुप्त मन तक पहुँच जाने की विस्तृत और सर्वसुलभ विधियाँ तो 'परकाया प्रवेश' पुस्तक में बताई गई हैं, पर यहाँ शिथिलीकरण का एक साधारण-सा विधान बताया जा रहा है, जिसके अनुसार बिना किसी विशेष अभ्यास के भी रोगी के गुप्त मन तक थोड़ा-बहुत संदेश पहुँचाया जा सके।

तुम बिना ''परकाया प्रवेश' को पढ़े रोगी के प्रकट मन को अपनी शक्ति से निद्रित नहीं कर सकते, इसलिए रोगी को स्वयं निद्रित हो जाने का आदेश करो। यदि वह बहुत कृश हो गया हो, तो बिस्तर पर ही पड़ा रहने दो। शिर कुछ ऊँचा उठा हुआ रहे। रोगी से कहो कि वह अपने अंगों को सीधा कर ले और शरीर जितना ढीला छोड़ सके छोड़ दे, उसे अपना शरीर लकड़ी की तरह जड़ ख्याल करना चाहिए और किसी अंग से कुछ भी काम न लेकर सारी देह को स्वतंत्र बिलकुल ढीली छोड़ देना चाहिए। वह मस्तिष्क को भी

खाली कर दे और उसमें जो भी भले-बुरे विचार चल रहे हों, उन्हें छोड़ दे। रोगी को हिदायत करो कि वह तुम्हारे चेहरे को अधखुले नेत्रों से देखे और भावना करे कि समस्त संसार शून्य है और उसमें केवल यही एक सिर है। थोड़ी देर में उसके पलक झपकने लगेंगे। वह चाहे तो आँखें बंद भी कर सकता है, पर आँखें मूँद लेने पर भी सिर के मानस को देखना न भूलें। इस प्रकार पाँच से लेकर दस मिनट के भीतर वह अर्द्धतंद्रित हो जाएगा और उसका बाहरी मन शांत होकर तंद्रा से गिरने लगेगा। यदि इस प्रकार की झपकी न आए, तो भी कुछ हर्ज नहीं। शरीर का शिथिल हो जाना भी पर्याप्त है।

अब तुम अपने मुँह को रोगी के कानों के निकट ले जाओ। एक फुट से अधिक का फासला न हो। जो मंत्र तुम्हें रोगी के गुप्त मन तक पहुँचाना है, उसके लिए पहले से ही तैयार होना चाहिए। मंत्र ठीक तरह से याद हो। उच्चारण धीमा, स्पष्ट और दृढ़ हो। बीच-बीच में मंत्र की शृंखला टूट जाने या कुछ-का-कुछ कहने लगने से एवं कर्कश वाणी में कहने से रोगी पर अच्छा असर नहीं पड़ेगा। मंत्र का उच्चारण करते समय प्रेम, प्रसन्नता, विश्वास और दृढ़ता के भाव तुम्हारे अंदर होंगे तो वह बहुत प्रभावशाली हो जाएगा। आरंभ में उच्चारण बहुत ही धीमा हो, जिससे रोगी एकदम चौंक न उठे, बाद को स्वर कुछ ऊँचा किया जा सकता है।

रोगी के दाहिने कान की ओर मुँह ले जाकर कहो "अब तुम शांत, आनंदित होकर विश्राम ले रहे हो। तुम्हारे शरीर की प्रत्येक मांसपेशी शिथिल होकर विश्राम कर रही है। तुम्हारा श्रद्धालु मन हमारी सूचनाओं को श्रद्धापूर्वक ग्रहण कर रहा है। ये सूचनाएँ उपजाऊ भूमि पर बोए बीज की तरह उगेंगी और तुम्हारे स्वास्थ्य को सुंदर एवं हरा-भरा कर देंगी।"

"तुम्हारा आमाशय, बलिष्ठ-बलिष्ठ-बलिष्ठ और आवश्यक भोजन को पचाने में समर्थ, इच्छुक एवं उद्यत है। वह आज, ठीक

अभी से काम करने में तत्पर हो गया है। तुम्हारा रक्त सजीव, सतेज और गरम होकर समस्त नाड़ी, तंतुओं में जोर से भ्रमण करने लगा है ओर हर जर्रे में बल चेतनता और निरोगिता उत्पन्न कर रहा है।"

"मैं तुम्हारे थके हुए अंगों में स्फूर्ति भेज रहा हूँ और उन्हें नवीन स्वास्थ्य, बल, पौरुष और तेज से भर रहा हूँ। अब तुम्हें तुरंत ही सुधार, उन्नति और शांति का अनुभव होगा। जो आनंद और निरोगिता के विचार तुम्हारे अंदर डाले जा रहे हैं, वह सारे कष्टों को हटाकर दूर कर देंगे। अब आनंद, सुख, शांति, प्रसन्नता, स्वास्थ्य और सुंदरता को अच्छी तरह याद कर लो, इन्हें बार-बार दोहराते रहो, क्योंकि इन्हीं का वातावरण चारों ओर भर दिया गया है।"

यह मंत्र या इसी भावार्थ का कोई और मंत्र भी तुम बना सकते हो। शब्द ऐसे हों जिन्हें रोगी अच्छी तरह समझता हो। रोगी की परिचित भाषा में इनका अनुवाद भी किया जा सकता है और आवयकतानुसार घट-बढ़ भी की जा सकती है, परंतु याद रखो कि सूचना में उन्नति सूचक शब्दों का ही प्रयोग करो। 'तुम्हारा रोग, पीड़ा, कष्ट आदि दूर हो जाएँगे।' ऐसा कहने से इन शब्दों का भी चित्र रोगी के गुप्त मन पर जम सकता है। उपर्युक्त मंत्र को कई बार दोहराना चाहिए। साधारणत: तीन बार काफी है। उच्चारण के समय हर शब्द धीरे-धीरे और अपने विश्वास के साथ कहना चाहिए।

मंत्र देने के बाद रोगी की धार्मिक भावना को आघात न पहुँचे तो 'ॐ आनंदम्' की मधुर ध्वनि करो। ये दोनों पद मधुर स्वर में गाकर एक प्रकार का गुंजन उत्पन्न किया जा सकता है, जिससे रोगी की नसों में संगीत की-सी प्रवाह धारा बहने लगे। इसका अद्‌भुत असर होता है।

अब रोगी की शिथिलता टूट चुकी होगी। उसके सिर पर हलका हाथ फिराओ और मुस्कराते हुए हलकी थपकियाँ दो। 'तुम अब अच्छे हो रहे हो' शीघ्र ही अच्छे हो जाओगे, अब तो कुछ शांति है न? पहले से तो कहीं अच्छे हो। इस प्रकार के वाक्यों से

रोगी को बार-बार संतोष देना चाहिए। यदि शिथिलता टूटी न हो तो अब तक रोगी के निकट बैठना चाहिए, जब तक वह पूरी तरह सचेत न हो जाए। अंत में संतोषप्रद वाक्य कहते हुए उसे उत्साहित करना चाहिए।

यह या इसी प्रकार की कोई विधि रोगी की मानसिक चिकित्सा के लिए काम में लाई जा सकती है। रोगी यदि पापपूर्ण भावनाओं से दब रहा हो, किसी बुरे काम की प्रतिक्रिया से बीमार पड़ गया हो, बीमारी की दशा में उसे पिछली दु:खद घटनाएँ याद आ रही हों तो कोई दान-पुण्य का कार्य रोगी के हाथों से कराना चाहिए, जिससे उसका मन हलका हो जाए। यदि रोगी बहुत कंजूस हो और धन जाने पर उलटा असर होने की संभावना हो, तो उसके हाथों से ऐसा दान करना चाहिए, जिससे खरच कम हो और दान का फल अधिक जीवों को मिलता मालूम पड़े—जैसे चींटियों के लिए थोड़ा आटा या शकर उनके विलों पर डलवाना। बंदरों को चने आदि डलवाना। मानसिक चिकित्सा की और भी अनेक विधियाँ रोगी और उसकी स्थिति को देखकर बनाई जा सकती हैं।



मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा